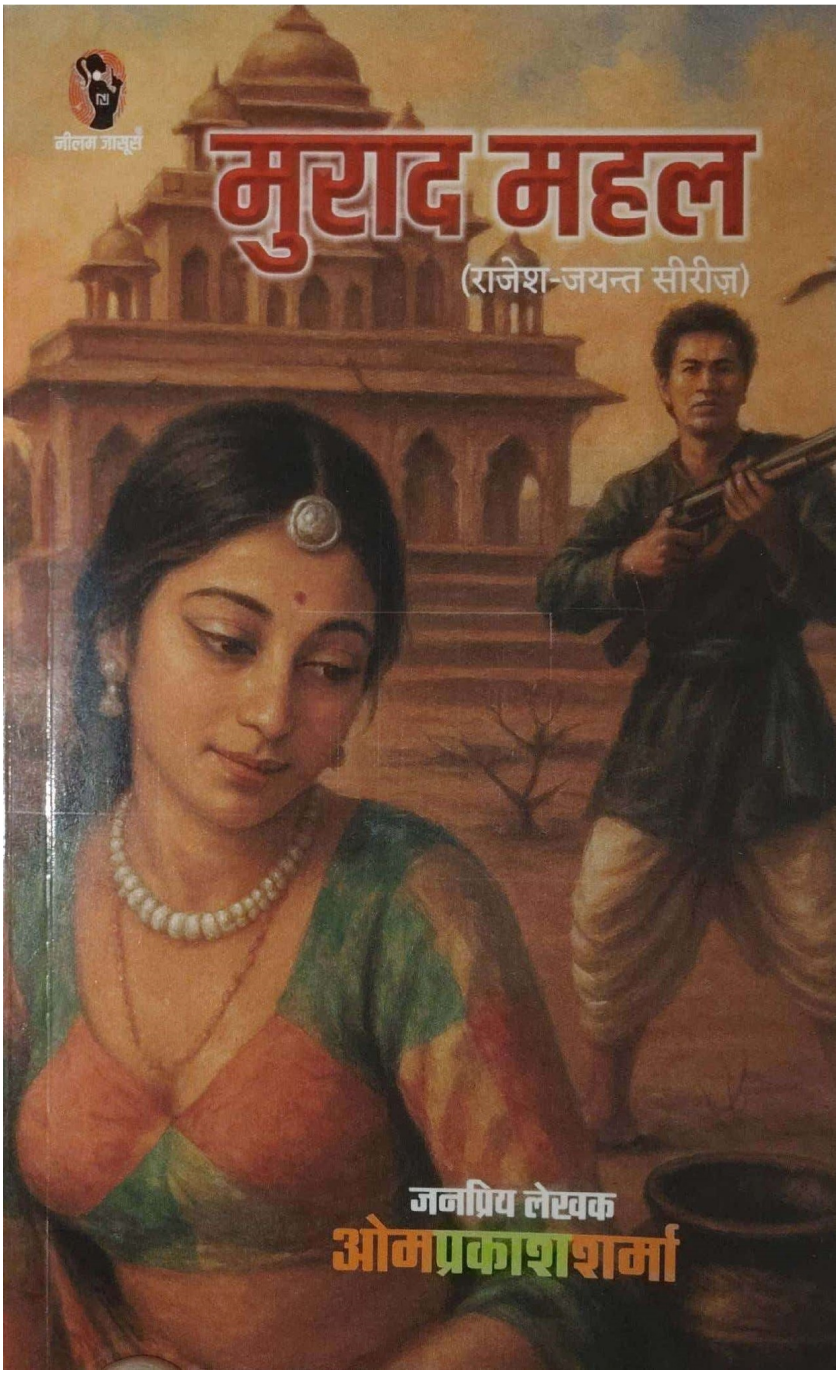
नीलम जासूस
मुराद महल
(राजेश-जयन्त सीरीज़)
जनप्रिय लेखक
ओमप्रकाशशर्मा

सत्य-ओम श्रृंखला-212

मुराद महल

जनप्रिय लेखक ओम प्रकाश शर्मा (1924-1998)

हिन्दी जासूसी और लोकप्रिय पल्प साहित्य के इतिहास में यदि कोई नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा जा सकता है, तो वह है-जनप्रिय लेखक ओमप्रकाश शर्मा। वे मात्र लेखक नहीं थे, बल्कि एक सांस्कृतिक आंदोलन के संवाहक थे, जिन्होंने अपने लेखन को आम जन की संवेदना, संघर्ष और स्वाभिमान से जोड़ा।

जब पल्प फिक्शन पर पश्चिमी छाया हावी थी, और लेखक अंग्रेज़ी जासूसी उपन्यासों की नकल या अनुवाद में व्यस्त थे, उस दौर में जनप्रिय

लेखक ओमप्रकाश शर्मा ने पूर्ण भारतीय संदर्भों और मिट्टी की महक वाले पात्रों के साथ जासूसी साहित्य को एक नया जीवन दिया। उन्होंने जासूसी को केवल अपराध या रहस्य तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उसे सामाजिक सच्चाइयों, नैतिक मूल्यों और देशभक्ति से जोड़कर एक नई दिशा दी।

उनकी सबसे बड़ी विशेषता थी- "भारतीयता का जीवंत चित्रण।" उनके उपन्यासों में नायक कोई अवास्तविक सुपरहीरो नहीं होता, बल्कि एक साधारण, संघर्षशील, आत्मबल से परिपूर्ण भारतीय नागरिक होता है, जो अन्याय, शोषण और अपराध के विरुद्ध खड़ा होता है। चाहे वह जासूस, वैज्ञानिक, जादूगर, ठग, वकील, पत्रकार, पुलिस अधिकारी हो या आम नागरिक - हर पात्र समाज की सच्चाइयों को प्रतिबिंबित करता है।

जनप्रिय लेखक ओमप्रकाश शर्मा ने अपने जीवन में चार सौ से अधिक उपन्यासों की रचना की, जिनमें जासूसी कथाओं के साथ-साथ सामाजिक, ऐतिहासिक और डरावनी कहानियाँ भी शामिल हैं। उनकी लेखनी का विस्तार इतना व्यापक था कि हर वर्ग का पाठक खुद को उनकी कहानियों में कहीं न कहीं खोज लेता था। हिंदी के लोकप्रिय साहित्य में उन्हें देवकीनंदन खत्री की परंपरा का सबसे कामयाब संवाहक माना जाता है

जनप्रिय लेखक ओमप्रकाश शर्मा की लोकप्रियता का अंदाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि उनके उपन्यास हर बुक शॉप, रेलवे स्टेशन, फुटपाथ और पुस्तक मेले की शान होते थे। उन्होंने उस पाठक वर्ग को साहित्य से जोड़ा, जो 'क्लासिक' साहित्य से दूर था, लेकिन कहानियों में सच्चाई, मनोरंजन और सामाजिक संदेश ढूँढता था।

उनके अतुलनीय योगदान को स्वीकार करते हुए उत्तर प्रदेश सरकार ने उन्हें "उपन्यास सम्राट" की उपाधि से सम्मानित किया-यह केवल एक पुरस्कार नहीं, बल्कि जनभावनाओं का सच्चा प्रतिफल था।

जनप्रिय लेखक ओमप्रकाश शर्मा मानते थे कि साहित्य का कार्य केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि समाज का मार्गदर्शन करना भी है। वे यथार्थवादी थे, परंतु उनकी दृष्टि में एक सपना था- एक ऐसा समाज जहाँ सत्य की विजय हो, अन्याय का अंत हो, और आम आदमी भी हीरो बन सके। यही कारण है कि उनके पात्र आज भी जीवित लगते हैं - चिर-प्रेरणास्रोत।

14 अक्टूबर 1998 को स्वर्गवासी होने वाले ओमप्रकाश शर्मा आज भी अपने प्रेमी पाठकों के बीच जनप्रिय बने हुए हैं।

नीलम जासूस 'भारत सरकार द्वारा रजिस्टर्ड ट्रेड मार्क है।
प्रकाशक

नीलम जासूस कार्यालय
सेल्स ऑफिस-
ई-16/299, कादम्बरी रोड, सेक्टर 8, रोहिणी, दिल्ली-110085

फ़ोन: 9310032467 (व्हाट्सएप)
ईमेल: neelamjasoos@gmail.com
संस्करण: अप्रैल 2025

इस पुस्तक का प्रकाशन श्री वीरेन्द्र कुमार शर्मा सुपुत्र स्व. ओम प्रकाश

शर्मा द्वारा नीलम जासूस कार्यालय से करवाया गया है।

(सी) वीरेन्द्र कुमार शर्मा

इस पुस्तक का कोई भी भाग प्रकाशक, लेखक की लिखित अनुमति के बिना छापना, मंचित करना, श्रव्य-पाठ करना अथवा फिल्मांकित करना पूर्णतया निषिद्ध है।

आईएसबीएन: 978-81-992739-8-6

मूल्यः 175 रुपये आवरण डिज़ाइन व मुद्रणः सुबोध भारतीय ग्राफिक्स, दिल्ली

फ़ोन: 9310032466

हमारे द्वारा प्रकाशित सभी पुस्तकें निम्न वेब साइट्स पर उपलब्ध हैं:

www.neelamjasoos.com

www.amazon.in | www.flipkart.in

मुराद महल (उपन्यास) लेखक: ओम प्रकाश शर्मा

सत्य-ओम शृंखला

नीलम जासूस कार्यालय के संस्थापक स्व. सत्यपाल वार्ष्णेय और जनप्रिय लेखक स्व. ओम प्रकाश शर्मा का एक दुर्लभ चित्र 1960 के दशक के उन सुनहरे दिनों की याद दिलाता है जब हिन्दी पल्प फिक्शन के सुनहरी दौर का आगाज़ हुआ था।

नीलम जासूस कार्यालय का इतिहास

हिन्दी पल्प साहित्य के स्वर्णिम युग की शुरुआत जिन कुछ संस्थानों ने की, उनमें नीलम जासूस कार्यालय का नाम उल्लेखनीय है। इसकी स्थापना वर्ष 1959 में, दिल्ली में श्री सत्यपाल वाष्र्णेय द्वारा उस समय की गई जब देश में शिक्षा के प्रसार के साथ, मनोरंजन और सामाजिक यथार्थ से जुड़ी साहित्यिक अभिव्यक्तियों की नई माँग पुस्तकों के रूप में जन्म ले रही थी। यह वह समय था जब हिन्दी जनमानस जासूसी, रहस्य, रोमाँच और सामाजिक चेतना से युक्त साहित्य को अपनाने को तैयार बैठा था।

नीलम जासूस कार्यालय ने न केवल इस माँग को समझा, बल्कि उसे एक नई दिशा भी दी। इस संस्था ने हिन्दी पल्प फिक्शन को नई उड़ान दी और अनेक दिग्गज लेखकों को मंच प्रदान किया, जिनमें प्रमुख नाम हैं:

जनप्रिय लेखक ओमप्रकाश शर्मा, वेद प्रकाश काम्बोज, सुरेन्द्र मोहन पाठक, कुमार कश्यप, लाडली मोहन, रमेश चंद्रगुप्त 'चंद्रेश' इन सभी लेखकों ने अपने लेखन से पाठकों के हृदय पर अमिट छाप छोड़ी और हिन्दी साहित्य में रहस्य-रोमाँच की दुनिया को जीवंत कर दिया था ।

1960 के दशक में जासूसी और सामाजिक उपन्यासों का प्रकाशन मासिक पत्रिका के रूप में किया जाता था। नीलम जासूस कार्यालय द्वारा "नीलम जासूस" और "राजेश" नामक जासूसी मासिक पत्रिकाओं का प्रकाशन होता था, इसके अलावा एक लोकप्रिय फिल्म पत्रिका "फिल्म अप्सरा" भी प्रकाशित की जाती थी

कोरोना काल और पुनर्जागरण

समय के साथ पल्प साहित्य की लोकप्रियता में कमी आई, परन्तु कोरोना काल के दौरान इस लोकप्रिय क्लासिक विधा का पुनर्जन्म हुआ। स्व. श्री सत्यपाल वार्ष्णेय जी के कनिष्ठ सुपुत्र श्री सुबोध भारतीय ने नीलम जासूस कार्यालय को 2020 में पुनर्जीवित किया। उनके नेतृत्व में क्लासिक पल्प साहित्य को नए-पुराने पाठकों से जोड़ा गया और अब तक 250 से अधिक लोकप्रिय उपन्यासों का प्रकाशन हो चुका है और जारी है। हमारे लेखक हैं- ओम प्रकाश शर्मा, वेद प्रकाश कांबोज, परशुराम शर्मा, चंदर और गुरुदत्त । इसके अलावा नए लेखकों को भी मंच प्रदान किया है।

विरासत और भविष्य

आज नीलम जासूस कार्यालय केवल एक प्रकाशन संस्था नहीं, बल्कि हिन्दी पल्प साहित्य की एक जीवंत परंपरा है-जहाँ किताब के हर पृष्ठ पर रहस्य, रोमाँच, सामाजिक यथार्थ और न्याय की पुकार गूँजती है। यह कार्यालय उस साहित्यिक विरासत का संवाहक है, जो आम पाठक की भाषा, संवेदना और जिज्ञासा से जुड़ी है।

आज नीलम जासूस कार्यालय नए दौर के साथ कदमताल करते हुए, न केवल प्रिंट माध्यम में सक्रिय है, बल्कि डिजिटल युग में भी अपने पाठकों से जुड़ रहा है। उत्कृष्ट सफेद पेपर में मुद्रित इसके उपन्यास अमेजन, फ्लिपकार्ट, तथा सोशल मीडिया जैसे प्लेटफॉर्म्स पर उपलब्ध हैं, और नए-नए पाठकों को पल्प साहित्य के उस स्वर्ण युग से जोड़ रहे हैं, जो कभी रेलवे स्टेशन, बस अड्डों की दुकानों और फुटपाथों पर सबसे तेज

बिकने वाली किताबों का दौर हुआ करता था।

नीलम जासूस कार्यालय को आज विश्व के सबसे बड़े हिंदी पल्प फिक्शन प्रकाशक होने का गौरव प्राप्त है। नीलम जासूस कार्यालय आज उस वाक्य को सार्थक करता है- " हिंदी पल्प फिक्शन की सुनहरे दौर की वापसी हो चुकी है"

मुराद महल
(राजेश - जयन्त सीरीज) (1960 के दशक में प्रथम प्रकाशित)
जनप्रिय लेखक ओमप्रकाश शर्मा
प्रकाशक--
नीलम जासूस कार्यालय
दिल्ली-110085

पुरातत्व विभाग के असिस्टेन्ट डायरेक्टर मिस्टर शंकर माथुर... प्रमेन्द्र की सारी बातें सुन कर बोले-'सभी मेहराबों की मरम्मत होगी, दो खम्भे नये लगाये जायेंगे, दरवाजे की बुर्जी नये सिरे से बनेगी... और निश्चय ही उन सब कामों में चार लाख रुपया खर्च हो जायेगा, यह सभी बातें मैं जानता हूँ। मिस्टर प्रमेन्द्र, बड़े ध्यान से मैंने तुम्हारी रिपोर्ट को पढ़ा है और उसे ज्यों की त्यों विभाग को फारवर्ड कर दिया है। दरअसल मैंने यह सब पूछने के लिए तुम्हें नहीं बुलाया है। अफसर मातहती के सवाल को गोली मारो। वह देखो... पाँच बज रहे हैं, समझ लो कि मैंने तुम्हें अपना दोस्त समझ कर चाय पर बुलाया है।'

प्रमेन्द्र मुस्कराया-'यह तो आपकी कृपा है सर !'

झुंझलाए से स्वर में माथुर बोले- 'भाड़ में झोंको सर को, मेरी बात समझने की कोशिश करो। भाई मेरे, मैंने तुम्हें ऑफिशियल काम से नहीं बुलाया है। दरअसल मैं कल ही कोट मुराद से लौटा हूँ। यूं तो मुराद कोट के विषय में बहुत सी बातें अखबारों में प्रकाशित हो चुकी हैं, परन्तु कोट मुराद ग्राम

के निवासियों से बातें हुईं तो उन्होंने एकदम दूसरे ढंग की ही बातें बताईं और सच जानो... ग्रामवासियों की बातें तो अलिफ लैला की कहानियों से भी अधिक दिलचस्प थीं। परन्तु यह केवल तुम्हीं बता सकते हो कि तथ्य क्या है? मेरा मतलब है... अखबारों में जो छपा है वह सत्य है, या गाँव वाले जो बताते हैं... वह सत्य है?'

पूर्ववत् मुस्कान सहित प्रमेन्द्र ने कहा- 'जी सत्य तो दोनों ही हैं। अलबत्ता वास्तविक तथ्य कुछ और ही है।'

चौंके माथुर साहब 'सत्य और तथ्य में भेद करते पहली बार तुम्हें ही देखा है।'

-'दरअसल बात ऐसी थी माथुर साहब कि अखबारों में केवल वही छपा जो मिस्टर राजेश ने चाहा। और गाँव वाले जो कहते हैं... वह उन्होंने आँखों देखा है। परन्तु वास्तव में तथ्य कुछ दूसरे ही हैं... जिनकी जानकारी कुछ सीमित व्यक्तियों को ही है। तब शायद आप पटना से ट्रांसफर होकर नहीं आये थे, उस

समय यहाँ लखनऊ में आपके स्थान पर मिस्टर गुहा थे। उन्हें मैंने सारा किस्सा विस्तार से यहाँ आकर सुनाया भी था।'

- 'उसी दिलचस्प कहानी को सुनने के लिए ही मैंने तुम्हें बुलवाया है। उस कांड के नायक वास्तव में तुम ही हो।'

- 'जी नहीं... नायक मैं नहीं हूँ। नायक तो मिस्टर राजेश ही हैं जिन्होंने अन्तिम दिन तक साहस नहीं छोड़ा और जान की बाजी लगा कर रहस्य को जान लिया। कहानी बेशक मुझसे आरम्भ होती है। अब मैं यह कहता हूँ कि सौभाग्य ही मुझे कोट मुराद ले गया था, परन्तु तब मैं सोचा करता था कि मेरा दुर्भाग्य मुझे वहाँ ले आया है।'

- 'खैर, अब तुम कहानी सुनाने की तैयारी करो। मूड बनाने के लिये चाय लोगे या कॉफी ?'

-'जी धन्यवाद ! मैं चाय या कॉफी दोनों में से कुछ भी बाहर नहीं पीता। दरअसल विवाह के समय मिसेज ने यह शर्त मनवा ली थी।'

- 'अरे!' माथुर मुस्कराये-'क्या सच?'

अफसर ने मातहत की ओर देखा। नवयुवक मातहत तनिक लजाया और अफसर ठहाका मार कर हँस पड़ा।

-'खूब भाई खूब !' माथुर बोले- 'बहुत खूब... कितनी तेजी से जमाना बदल रहा है इसके जीवित प्रमाण हो तुम। गये जमाने में स्त्रियां पतिव्रता हुआ करती थीं, तुम्हारे इस नए जमाने में पति पत्नीव्रता होने लगे। बहुत खूब !'

प्रमेन्द्र होठों पर धीमी सी मुस्कान लाये माथुर की मुस्कान और ठहाकों में छिपे व्यंग को निहारता रहा। उसका उत्तर माथुर साहब के मनोविनोद का खूब साधन बना।

खूब हँस लेने के बाद माथुर बोले- 'अच्छा भाई... अब तुम अपनी कहानी

सुनाओ।'

अफसर मातहत का भेद स्वयं माथुर साहब ने समाप्त कर दिया था, अतएव निस्संकोच जेब से सिगरेट निकाल कर प्रमेन्द्र ने कहा- 'सिगरेट लीजिये।'

- ' धन्यवाद... लगता है मिसेज ने सिगरेट पीने की इजाजत दे रखी है?'

-'जी हाँ।' माथुर साहब की तथा अपनी सिगरेट जलाते हुए प्रमेन्द्र ने कहा- 'यूं चाय पीने की भी इजाजत उन्होंने दे रखी है, परन्तु केवल घर में। माथुर

साहब, आपको ऐतराज न होगा अगर मैं कुछ वाक्य कहानी कहने से पहले कहानी की भूमिका में कहूँ? पत्नी का पतिव्रता होना अथवा पति का पत्नीव्रता होना नियम पर नहीं... परिस्थिति पर निर्भर है। जो स्त्रियां मिट्टी के माधो की तरह गुड़िया की भांति पुरुष के साथ विवाह वेदी पर बैठती हैं... उनकी बिसात, उनकी परिस्थिति पति को देवता समझ कर उसे पूजने जैसी ही होती है। परन्तु जो स्त्री साहस के साथ किसी का हाथ थाम कर भरी बस्ती में उसे पति स्वीकार करे, वह पति-गृह में अपना सम्मान चाहे तो इसमें विस्मय की क्या बात है?'

बात साधारण थी, परन्तु कहने का ढंग असाधारण था।

माथुर साहब तनिक सिटपिटा गए- 'तुम शायद नाराज हो गए मिस्टर प्रमेन्द्र ?'

- 'जी नहीं।' प्रमेन्द्र के चेहरे पर पूर्ववत मुस्कान खेल गई- 'न आपने कोई बुरा मानने की बात कही और न मैंने बुरा माना है। मैं केवल उस कहानी की भूमिका आपको सुना रहा हूँ जो आपको सुनानी है। उस कहानी का आरम्भ करने से पहले मैं आपसे अपनी मिसेज के बारे में केवल इतना कहना चाहूँगा कि आम शहरी लड़कियों से वह जुदा है। यह ठीक है उनकी शिक्षा-दीक्षा लखनऊ में हुई है, परन्तु उसका जन्म कोट मुराद गाँव में हुआ है। वहीं बचपन बीता है और वहीं के अन्न जल का प्रभाव उस पर अब तक है। शहर में रह कर भी वह शहरी नहीं है। उसमें देहाती स्त्रियों की सी कर्मठता और साहस अब भी विद्यमान है। मेरी ही भांति इस कहानी की एक पात्र वह भी है। कोट मुराद गाँव में आप एक रात तो ठहरे ही होंगे ?'

- 'नहीं।' माथुर बोले-'मैं लगभग आधी रात गए ही लखनऊ से विभाग की गाड़ी द्वारा वहाँ गया था, सुबह नौ बजे कोट मुराद पहुँच गया था। दो घंटे कोट देखने में लगे। लौट रहा था कि ठाकुर मंगल सिंह मिल गए, जबरन दोपहरी भर रोके रखा। अपने साथ गाँव में ले गए तभी कुछ बातें हुई थीं।'

-'दिन में सुनी हुई कहानियां रोचक नहीं होतीं माथुर साहब। काश आप रात को ठहरते ! खैर, मैं आपको वह सनसनी और रहस्य से भरी कहानी सुनाता हूँ जो आरम्भ तो मुझसे हुई थी, परन्तु समाप्त किन्हीं और जीनियस लोगों द्वारा की गई। कहानी में कहीं-कहीं ऐसी बातें आएंगी जिनसे आप परिचित हैं। परन्तु आवश्यक है कि कहानी को तारतम्य में सुनने के लिए आप उन बातों को भी मेरे ढंग से सुनें।'

-'अवश्य सुनूंगा... कहो"

-'सुनिए...।'

जैसा कि आप जानते ही हैं ब्रिटिश युग में पुरातत्व विभाग ऐतिहासिक इमारतों के रख रखाव पर इतना खर्च नहीं करता था, जितना आज के प्रजातंत्र युग में होता है। कुछ विशेष भारतीय प्राचीन इमारतों को छोड़ कर बाकी अन्य इमारतों के प्रति विभाग अपना केवल इतना ही कर्त्तव्य समझता था कि इमारत पर 'सुरक्षित इमारत' का बोर्ड लगा दे और अंट-शंट विवरण सहित... गलत या सही, एक नक्शा फाइल करके रिकार्ड में रख दे।

मेरा यह उदाहरण कम से कम कोट मुराद पर पूरी तरह लागू होता है। दिल्ली में पुरातत्व विभाग में असिस्टेन्ट इंजीनियर नियुक्त होकर जिस दिन मैं नौकरी का चार्ज लेने लखनऊ पहुँचा, उसी दिन मुझे मिस्टर गुहा से आदेश मिला कि मैं आज रात की गाड़ी से कोट मुराद जाऊं और उस प्राचीन इमारत की स्थिति का पूरा विवरण विभाग को दूं।

नई नौकरी थी। बड़ी उमंग के साथ मैं ट्रेन पर सवार हुआ। जैसा कि आप जानते हैं कोट मुराद जाने के लिए नौबतपुर स्टेशन पर उतरना पड़ता है और उस स्टेशन पर दिन रात में केवल तीन पैसिंजर ट्रेन ठहरती हैं। फलस्वरूप मेल ट्रेन जिस रास्ते को केवल चार घंटे में पार करती, उसी

रास्ते पर पूरे दस घंटे बोर होकर मैं सुबह आठ बजे बिना प्लेटफार्म वाले स्टेशन नौबतपुर पर उतरा।

वह अगस्त का महीना था। आकाश पर गहरे काले मेघ मंडरा रहे थे। जहाँ तक दृष्टि जाती थी... हरियाली आँखों को तृप्ति का वरदान देती प्रतीत होती थी।

स्टेशन से कोट मुराद तक छः मील की पक्की सड़क तो है, परन्तु शायद तेज बारिश की सम्भावना के कारण सवारी के नाम पर वहाँ केवल दो तांगे थे, जो मेरे पहुँचने से पूर्व ही रेलवे लाइन की दूसरी ओर वाले गाँव तेजपुर के मुसाफिरों को लेकर चले गये।

स्टेशन निर्जन था और सड़क सुनसान। कोट मुराद पहुँचना तो था ही... मैंने बरसाती जूता और कोट पहना और निश्चय किया कि छः मील की यात्रा

पैदल ही करूंगा। उस समय बड़ी प्यारी पुरवा हवा चल रही थी और आकाश से हल्की फुहारें पड़ने लगी थीं।

अटैची उठा कर चलने ही वाला था कि तभी अचानक उस वृक्ष पर दृष्टि जा पड़ी जिसके नीचे मैं खड़ा था। वृक्ष आमों से लदा हुआ था। देखते ही मूड रोमांटिक हो गया। सोचा पहले आमों का नाश्ता होगा और फिर सफर। अटैची नीचे ही छोड़ कर मैं वृक्ष पर चढ़ गया।

और तभी आसमान जोर से गरजा और मूसलाधार बरसने लगा। यों तो बार-बार हर वर्ष ही देश में आम का सीजन आता है, परन्तु जीवन के छब्बीस वर्ष बिता लेने पर भी आनन्द की जो अनुभूति उस दिन प्राप्त हुई... पहले कभी न हुई थी।

आकाश में मेघ गरज भी रहे थे, बरस भी रहे थे। मेरे आस-पास का वातावरण पके आमों की सुगन्ध से महक रहा था। मार्ग की चिन्ता छोड़ कर मैं आमों में एकाग्र हो चुका था।

तब एक ऐसी घटना घटी, जिसने न केवल मुझे चौंका दिया बल्कि मुझे वास्तविकता से हटा कर दूर ऐसे कल्पना लोक में पहुँचा दिया... जहाँ प्रत्येक अनहोनी सम्भव है।

चौंक कर मैंने नीचे देखा।

मानो आकाश से वर्षा के कारण कोई परी धरती पर उतर आई हो ! पंख तेज हवा के कारण टूट गए हों, हल्के गुलाबी रंग की साड़ी पानी में भीग कर बदन से चिपकी गहरे गुलाबी रंग की प्रतीत हो रही थी।

मैं विश्वास न कर सका कि पेड़ के नीचे ऐसे वातावरण में कोई सुन्दरी है? अभी कुछ मिनट पहले ही जब मैं पेड़ पर चढ़ा था तो दूर-दूर तक कोई प्राणी वहाँ नहीं था।

और आँखें तरेरे मेरे कल्पना लोक की परी चीख कर मुझसे कह रही थी-'भगवान ने आँखें दी हैं तो उनका उपयोग भी सीखो। गुठली देख कर नीचे फेंको।'

आम खाने का मूड समाप्त हो गया। मैं तेजी से उतर कर नीचे आ गया। वह युवती जिसे मैं अब तक असाधारण परी समझे हुए था... बुरी तरह भीग गई थी और जहाँ वह खड़ी थी, वहीं मेरे द्वारा ऊपर से फेंकी गई आमों की कई गुठलियां पड़ी थीं।

मुराद महल 11

-' क्षमा कीजियेगा।' मैंने विनम्र स्वर में कहा- 'अभी कुछ मिनट पहले तो आप यहाँ नहीं थीं। सम्भव है कि मेरे द्वारा फेंकी गई कोई आम की गुठली आपको लगी हो ! मुझे खेद है, और आशा है कि अनजाने में हुई इस गलती को आपने क्षमा कर दिया होगा। कृपया मेरी उत्सुकता को शान्त करें। कुछ क्षण पहले आप यहाँ नहीं थीं। मैं वृक्ष पर चढ़ा और फिर एक गड़गड़ाहट के साथ मूसलाधार वर्षा होने लगी। स्टेशन से मैं आ रहा हूँ और मैं स्टेशन से चलने वाला अन्तिम यात्री था। प्रश्न यह है कि आप आई कहाँ से? मेरा मतलब है कि आप धरती निवासिनी हैं या आकाश की...?'

युवती ने झुंझला कर मेरी ओर देखा। ऐसे जैसे उसका बस चले तो मुझे गोली मार दे। गुस्से में वह ऐसी लगती थी जैसे दक्ष के दरबार में सती।

उसने मुझे निहारते हुए कहा- 'आपका दिमाग तो सही है?'

सच जानिये इस सवाल का उत्तर मैं तुरन्त ही न दे सका। यूं कहने को कह सकता था कि मेरा दिमाग बिल्कुल सही है, परन्तु अगर वह इस बात के उत्तर में कहती कि क्या सबूत है कि तुम्हारा दिमाग सही है तो सचमुच मेरे

पास अथवा मेरी अटैची में कोई डाक्टरी प्रमाण-पत्र नहीं था।

सोच समझ कर मैंने उत्तर दिया- 'जी मेरा ख्याल है कि मेरा दिमाग सही है। हालांकि मेरे पास इसका कोई सबूत नहीं है। वैसे सरकारी नौकरी का मेरे पास नियुक्ति पत्र है। आप चाहें तो देख सकती हैं। शायद आप जानती होंगी कि सरकारी नौकरी में वही लोग लिए जाते हैं जिनका दिमाग दुरुस्त होता है। क्या आप मेरा नियुक्ति पत्र देखना पसन्द करेंगी?'

- 'जी नहीं।' उसने उपेक्षापूर्व मेरी ओर से मुँह फेर लिया।

आकाश फिर गरजा... वर्षा भी कुछ और तेज हो गई।

मैंने फिर पूछा- 'क्या आप यह बताने की कृपा करेंगी कि आपको यह संदेह कैसे हुआ कि मेरे दिमाग में कुछ गड़बड़ी है?'

उसने फिर मेरी ओर देखा। ऐसे स्वर में बोली जैसे बोल कर मुझ पर कोई बड़ा भारी एहसान कर रही हो- 'जो व्यक्ति किसी लड़की से पूछे कि वह धरती पर रहती है या आकाश में... उसका या तो दिमाग खराब है, या फिर वह शरारती है।'

- 'जी मैं न तो शरारती हूँ और न ही मेरा दिमाग खराब है। दरअसल मैं

बड़े चक्कर में पड़ गया हूँ। सड़क पर कोई नहीं था, स्टेशन पर दो स्टेशन कर्मचारियों के अतिरिक्त मुझे कोई परिन्दा भी दिखाई नहीं पड़ा... यह सवाल मुझे परेशान किये हुए है कि आप आई कहाँ से ?'

- 'स्टेशन से।'

- 'ट्रेन से उतरी हैं?'

-'जी नहीं।'

-'तब...?'

-'मैं स्टेशन पर अपने भाई को लेने आई थी। स्टेशन के बाहर मेरी कार खड़ी है। भाई तो आए नहीं, आपको इस सड़क पर जाता देखा तो सोचा कि यकीनन आप टीकमखेड़ा या मुराद कोट जाने वाले हैं। आप ही को बुलाने आई थी कि मेह जोर से बरसने लगा और जैसे ही वृक्ष के नीचे पहुँची, आपने तड़ाक से मेरे सिर में गुठली दे मारी...।'

उस समय जी चाहा कि झुक कर उस मानवी के दोनों हाथ चूम लूं। कितना कृतघ्न था मैं भी ! वह बेचारी मुझे मोटर में ले जाने के लिए आई और मैंने उसके सिर में झूठी गुठली दे मारी।

- 'मुझे अफसोस है श्रीमती जी...।'

-'क्या बक रहे हैं आप...?' वह चीखी।

-'क्या अब फिर कोई गलती हुई है मुझसे?'

- 'श्रीमती विवाहिता को कहा जाता है। क्या मैं आपको विवाहित दिखाई पड़ती हूँ?'

इस अजीब तर्क से मुझे झुंझलाहट भी हुई- 'आप तो बात बात में गुस्सा हो जाती हैं! कद आपका साढ़े पाँच फीट से कम नहीं है। वजन भी डेढ़ मन से ज्यादा ही होगा। उम्र भी बीस के आस-पास है ही। अब ऐसी क्या पहचान है जिससे आप कुमारी लगती हों?'

- 'कोई पहचान नहीं है?'

- 'बेशक कोई पहचान नहीं है।'

युवती ने आँखें निकालते हुए पूछा- 'आपकी माँ है ?'

-'जी नहीं, वे स्वर्ग में हैं। ईश्वर उनकी आत्मा को शान्ति दे।

- 'बहन?'

- 'मैं अपने माँ बाप की इकलौती सन्तान हूँ।'

- 'पत्नी है...?'

- 'अभी इस रोग से मुक्त हूँ।'

- 'तब आप नहीं जान सकते कि श्रीमती और कुमारी में क्या अन्तर होता है? फिर कहीं ऐसी मूर्खता मत कीजियेगा। जान लीजिये... विवाहिता स्त्रियां माँग भरती हैं और माथे पर बिन्दिया लगाती हैं।'

- 'इतना तो मैं जानता हूँ, दूध पीता बच्चा नहीं हूँ। यह भी जानता हूँ कि भरी माँग और बिंदिया ऐसी मूसलाधार वर्षा में नहीं ठहर सकती। एक बात और भी है। वह यह कि मैं झगड़ा पसन्द नहीं करता। छोड़ो इस बहस को... मैं श्रीमती शब्द वापस लेता हूँ और कुमारी शब्द कहता हूँ। फरमाइए... आप कोट मुराद तक जायेंगी?'

- 'इरादा तो है।'

- 'क्या आप कृपा करके मुझे अपनी उस कार में कोट मुराद तक ले चलेंगी, जिसे मैंने अभी तक देखा नहीं है।'

-'अवश्य ले चलूंगी। परन्तु क्या आप टायर बदलने में मेरी सहायता करेंगे? दरअसल जाने कैसे एक पहिए की हवा निकल गई है। पम्प तो यहाँ मिलेगा नहीं। अलबत्ता सारा सामान है, हवा भरा स्पेयर व्हील है... क्या आप उसे बदलने का कष्ट करेंगे?'

इस प्रकार रहस्य खुला। जिस सुन्दरी को देख कर आकाश में उड़ने वाली परी का भ्रम हुआ था... वह कोई परी नहीं, एक कुंआरी लड़की थी जो स्टेशन से चल कर मेरे पास इसलिए आई थी कि मैं उसकी कार का व्हील बदलने की बेगार करूं।

मैं इन्कार न कर सका। यह सही है कि इसके पीछे केवल कोट मुराद तक कार में जाने की ही भावना नहीं थी... भावना की मनोरमता उस सुन्दरी के सानिध्य में निहित थी। तभी तो डेढ़ घंटे मैं लगभग एक फीट कीचड़ में धंसा व्हील खोलता और फिर कसता रहा... और वे देवी चौधरानी वर्षा से बचने के लिए स्टेशन के शेड में खड़ी रहीं।

यह सन उन्नीस सौ तीस के मॉडल की फोर्ड गाड़ी थी और शक्ल सूरत से ऐसी थी कि दिल्ली का कोई कबाड़ी तो उसे खरीदना पसन्द नहीं करेगा।

किसी तरह कई बार हैंडिल घुमाने पर कार स्टार्ट हुई। अब वह बड़ी शान से स्टेयरिंग पर आ बैठी थी।

अब साधारण शिष्टाचार की बातें आरम्भ हुईं।

उसने पूछा- 'कोट मुराद में आप किसके यहाँ जा रहे हैं?'

मैंने उत्तर दिया-'कोट मुराद गाँव नहीं, वास्तव में मैं मुराद महल जा रहा हूँ। पुरातत्व विभाग का इंजीनियर हूँ। देखने जा रहा हूँ कि उस ऐतिहासिक इमारत में किसी मरम्मत वगैरह की आवश्यकता तो नहीं है?'

मेरी बात सुन कर तो युवती ऐसी घबराई कि उसके हाथ बेकाबू हो गए और कार नाले की एक छोटी सी पुलिया से टकराते टकराते बची। शायद एक्सीडेन्ट से बचने के लिए ही उसने इतनी तेजी से ब्रेक लगाए कि अगर वह कार रूपी बक्सा अगर पुलिया की मुंडेर का सहारा न पाता तो उलट कर नाले में जा गिरता।

- 'क्या बात हुई? आप यकायक घबरा क्यों गई हैं... क्या कुछ तबियत खराब...?'

कार का इंजन अब भी चल रहा था। मेरी पूरी बात बिना सुने ही वह

बोली-'कोट मुराद के महल के विषय में आप जानते हैं?'

- 'जी हाँ। हालांकि मेरी नौकरी नई है फिर भी मैं पुरातत्व विभाग का नौकर हूँ। कोट मुराद को अकबरी जमाने के दो हजारी मनसबदार मुराद खां ने बनवाया था। कोट मुराद का महल फतहपुर सीकरी के नक्शे पर बना है। और चूंकि व्यास और विस्तार में फतहपुर सीकरी से छोटा है... इसलिये सुन्दर भी है। मुराद खां मनसबदार के खानदानी अट्ठारह सौ सत्तावन तक महल में रहे और फिर गदर वालों के मददगार समझ कर अंग्रेजों ने उनकी जागीर जब्त कर ली और सारा खानदान तीन-तेरह कर दिया।'

- 'उफ!' युवती ने एक निश्वास ली-'मुराद कोट में अभी पिछले दिनों जो कुछ हुआ है, आप जानते हैं?'

बाहर मेह वैसे ही बरस रहा था, हवा खूब ठण्डी थी। कार की खिड़कियां खुली हुई थीं इसलिये कि उनमें शीशे ही नहीं थे। परन्तु मैंने देखा कि युवती के चेहरे पर पसीने की बूंदें झलक आई थीं। उसका मादक गुलाबी रंग सफेद सा गया पड़ था।

मुराद महल 15

विस्मय से मैंने पूछा- 'क्या हुआ कोट मुराद में?'
- 'हत्या।'
मैं चौंका-'किसकी हत्या ?'
- 'मेरे पिता... कैप्टेन रघुनाथ की।'
- 'ओह ! कब...?'

युवती की आँखों में आंसू छलछला उठे-'दो महीने पहले।'
मैं बोला-'मुझे आपसे सहानुभूति है। तो कोट मुराद के महल के साथ आपकी एक दुखदाई स्मृति जुड़ी हुई है ! शायद आपको यह जान कर खुशी होगी कि अब कोट मुराद महल को ढंग से संवारा जायेगा और देख-भाल के लिये दो सिक्योरिटी गार्ड्स और एक माली रक्खा जायेगा। मैं यही ब्योरा लेने आया हूँ कि महल को संवारने में कितने खर्च की आवश्यकता है?'

- 'नहीं... आप मुराद महल में न जायें। आप... आप विश्वास नहीं करेंगे कि उसमें... उसमें प्रेत रहता है...।' वाक्य पूरा करते-करते युवती रो पड़ी।

युवती का फक चेहरा और उसके आंसू मुझे भ्रम में नहीं डाल सके। जब पुरातत्व विभाग के डायरेक्टर महोदय ने मुझे नियुक्ति पत्र दिया था, तब बड़ी मार्के की बात कही थी। उन्होंने कहा था- 'पुरातत्व विभाग में इंजीनियर होना कुछ अधिक जिम्मेदारी का काम है, यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये। हमारा विभाग इसलिये है कि हम प्राचीन स्मारकों की रक्षा करें और लोगों में प्रचलित भ्रमों के शिकार न हों। एक उदाहरण सुनाता हूँ... एक सीनियर थे, प्राचीन इमारत की जड़ में लगा पीपल का वृक्ष उन्होंने इसलिये नहीं कटवाया कि लोगों में ऐसा विश्वास था कि पीपल करामाती है। फलस्वरूप पीपल के भार से इमारत की एक दीवार गिर पड़ी और फिर लाख रोक-थाम के बावजूद भी वह इमारत नष्ट हो गई। अतएव मेरी नसीहत याद रखना। पुरातत्व विभाग की इंजीनियरी का आधार ठोस साहस है, कही-सुनी बातें नहीं हैं।'

मैंने उस युवती से कहा- 'आप व्यर्थ घबरा गई हैं। माना कि आपके पिताजी की हत्या हुई, परन्तु हुई तो हत्यारे द्वारा ही। इसमें बेचारे मुराद

महल का क्या दोष?'

-'मेरे पिता की हत्या प्रेत द्वारा हुई।'

मन में हल्की सी भय की लहर अब मैंने भी अनुभव की। परन्तु प्रकट

में हँसते हुए कहा-'यह आपका भ्रम रहा होगा। भूत प्रेत केवल कहानियों की चीजें हैं।'

- 'परन्तु जो हुआ उसे तो पूरे कोट मुराद गाँव ने देखा है। आप मेरे लिए सर्वथा अपरिचित हैं, फिर भी मेरी राय मानें... आप पहले मेरे साथ गाँव में चलें। लोगों से उस घटना का विवरण सुन लें जो मुराद महल में हुई है। फिर निश्चित करें कि आपको महल के अन्दर जाना चाहिए अथवा नहीं? आदमी तो क्या... अब तो मुराद महल की ओर पशु भी नहीं जाते।'

मैंने कहा-'अच्छा... ठीक है।'

युवती के चेहरे पर संतोष की आभा झलकी। उसने कार बैक की और फिर तेजी से ड्राइव करने लगी।

युवती ने एक पक्के कोठीनुमा बने मकान के सम्मुख कार रोक दी और मुझे जहाँ ले जाकर बैठाया... वह स्थान वैसा ही सजा हुआ था, जैसे शहर के किसी बंगले का ड्राइंगरूम।

वर्षा अब कुछ हल्की पड़ चुकी थी... परन्तु बादल अभी भी नहीं छंटे थे।

- 'आप यहाँ पाँच मिनट बैठें... मैं अभी आती हूँ।'

इतना कह कर वह युवती चली गई और उसके जाने के कुछ ही क्षण बाद एक दूसरी युवती ड्राइंगरुम में प्रविष्ट हुई। पहली युवती से यह बदन में कुछ भारी थी, रंग तनिक सांवला था। वह साधारण वायल की साड़ी पहने थी... बदन पर कई सुहाग चिन्ह भी थे।

- 'नमस्ते भैया !' वह निस्संकोच स्वर में आकर बोली।

मैं उठा। हाथ जोड़ कर बोला- 'नमस्ते।'

- 'बैठो भैया... खड़े क्यों हो ! उमा बीबी जी अभी आती हैं, पड़ोस के मकान तक गई हैं। मेरा नाम श्यामा है... मैं उमा बीबी जी की भाभी हूँ।' ह्रँ१

-'मेरा नाम प्रमेन्द्र है।' बैठते हुए मैंने कहा।

- 'कष्ट इसलिए दिया है कि चाय पियोगे या दूध...?

'जी धन्यवाद। आप कष्ट न करें।
-'वाह ! कष्ट कैसा? तुम्हारा अपना ही घर है भैया। यूं बीबी जी चाय बनाने के लिए कह गई हैं, परन्तु मेरा सुझाव है कि दूध पियो।'

- 'जी आप अपनी बीबी जी का ही सुझाव मानें।' मैंने तनिक मुस्कराते हुए कहा।

मैं नहीं समझ पाया कि श्यामा के वाक्य में व्यंग था अथवा स्वाभाविक सहजता। वह बोली-'आज जाना कि बीबी जी के सुझाव को काटना केवल हमारे लिए ही नहीं, आपके लिए भी संभव नहीं है।'

परन्तु मुझे लगा जैसे श्यामा के वाक्य के पीछे परोक्ष व्यंग हो ! दो-ढाई घंटे की कुल पहचान थी और मैने पहली बार अभी ही जाना था कि स्टेशन से गाँव तक लाने वाली मेरी सहयात्री का नाम उमा है। कुछ ही मिनट बाद श्यामा चाय और नाश्ता ले आई।

मेरे लिए विस्मय की बात यह थी कि गंवई गाँव के इस परिवार में सभी कुछ शहरी था। अनेकों फोटोग्राफ्स ड्राइंग रूम में लगे थे। उन्हीं में विश्वविद्यालय की स्नातक के रूप में उमा का भी चित्र था।

शिष्टाचार निभाने के लिए श्यामा भी मेरे साथ बैठी।

- 'तो भैया... बीबी जी का सुझाव मानोगे न ?'

- 'कैसा सुझाव ?'

- 'महल में तो नहीं जाओगे ?'

- 'महल !'

ड्राइंग रूम के दरवाजे से टीले पर बना लाल पत्थर का मुराद महल दिखाई पड़ रहा था। बिल्कुल सीकरी के बुलन्द दरवाजे के ढंग का बना हुआ दरवाजा और उसके नीचे सीढ़ियां, जो नीचे दिखाई पड़ रही थीं।

मुराद महल की ऊंची दीवारों में भव्यता थी। गुम्बद जैसे अतीत के प्रहरी थे।

-'महल में जाने की मेरी जिद नहीं... मजबूरी है। मैं पुरातत्व विभाग का नौकर हूँ।'

-'पुरुष के लिए नौकरी बड़ी चीज है, परन्तु जान की भी कम कीमत नहीं है भैया ! वह चित्र देखा... यह... यह मेरे कैप्टेन ससुर का चित्र है। द्वितीय महायुद्ध

में इन्होंने साहस और वीरता से इम्फाल का मोर्चा संभाला था। शिकारियों में इनके जीवन और साहस की कहानियां आज भी प्रचलित हैं और आगे भी भुलाई नहीं जा सकेंगी। उनके अचूक निशाने का चमत्कार मैंने भी कई बार देखा है। यह भी मुराद महल से टकराए और चूर-चूर हो गए।'

- 'कुछ ऐसी ही बातें उमा जी भी कह रही थीं। उनकी उदासी और आंसू देख कर मैं उनसे यह पूछने का साहस नहीं कर सका कि असल में

मामला क्या है? वह प्रेत की बातें कर रही थीं, जो एक अस्तित्वहीन संज्ञा है। फिर भी अगर थोड़ी देर के लिए मान लिया जाए कि प्रेत है... तो भी उसकी केवल आपके श्वसुर जी से ही क्या दुश्मनी थी?'

घटना इस समूचे परिवार के लिए कितनी दुखदाई थी, इसका प्रमाण थीं श्यामा की नम आँखें। उसका खिला हुआ चेहरा मुरझा सा गया।

बोली-'मेरे श्वसुर... जैसा कि मैंने आपको बताया, फौज के रिटायर्ड कैप्टेन थे और जीवन और साहस में उनका जवाब दूर-दूर तक नहीं था। यह बसन्त के आरम्भ की बात है, इस इलाके का कुख्यात डाकू शेरसिंह पुलिस द्वारा मुराद महल में घेर लिया गया। हालांकि पुलिस दल के लगभग सौ आदमी थे जिन्होंने मुराद महल घेर रक्खा था। स्वयं प्रान्त के सुपरिटेंडेंट आफ पुलिस भी यहाँ मौजूद थे। परन्तु चूंकि शेरसिंह का दल ऊंचाई पर था और अपने आपको छुपा कर बड़ी सुगमता से निशाना लगा सकता था, फलस्वरूप सारा दिन संघर्ष में बीता और दो पुलिस मैन जख्मी हुए। सुपरिटेंडेंट महोदय का विचार था कि बिना कुमुक लाए महल पर चढ़ाई करना व्यर्थ होगा। परन्तु कैप्टेन साहब उनसे सहमत नहीं हुए। बड़ी लम्बी बहस हुई और गाँव वालों के बीच मेरे श्वसुर ने शर्त बदी कि वह अकेले ही पीछे से महल में प्रवेश करके डाकुओं को खदेड़ देंगे। कुछ परिचितों ने उन्हें व्यर्थ जान जोखिम में डालने से रोका भी, परन्तु वह अपने ढंग के एक ही जिद्दी थे। रात हुई... महल का यह भाग जो आपको यहाँ से दिखाई दे रहा है, सर्च लाइटों के प्रकाश से जगमगा रहा था। परन्तु महल के पीछे वाला भाग जो कुछ अधिक ढलवां और कंटीली झाड़ियों से भरा है, नीरव और अंधकारपूर्ण था। अरे... अरे, तुम चाय नहीं पी रहे हो भैया ? चाय पियो न !'

- 'फिर क्या हुआ?' चाय की प्याली उठा कर मुँह से लगाते हुए मैंने पूछा।

-'कैप्टेन साहब स्टेनगन लेकर अकेले ही पीछे से महल की ओर बढ़े और उन्होंने यह साबित कर दिया कि वे बात के धनी हैं। पुलिस और गाँव वाले

आश्चर्यचकित रह गए, जब महल के पीछे से परिचित स्टेनगन से गोलियों की बाढ़ छूटी। यह बात प्रमाणित हो चुकी थी कि वह महल के अन्दर प्रवेश पा चुके हैं। पुलिस सुपरिटेंडेंट को लेशमात्र भी विश्वास नहीं था कि ऐसा हो सकेगा। अब पुलिस के सामने कैप्टेन साहब की जिन्दगी का सवाल था जो अकेले ही डाकुओं के दल से जूझ रहे थे। उन्होंने पुलिस को आगे बढ़ने का आदेश दिया, सर्च लाइटों को बुझवा दिया और जो पुलिस मैन आगे बढ़े... उन्हें दस्ती बम दे दिए गए। जो काम पुलिस सारे दिन की भाग-दौड़ में नहीं कर पाई थी, वह लगभग डेढ़ घंटे में बिल्कुल समाप्त हो गया। अपने छः साथियों सहित शेरसिंह मारा गया। उसके शरीर में पीछे से कैप्टेन साहब की चलाई हुई तीन गोलियां बरामद हुईं और पुलिस सब इन्सपेक्टर कश्यप द्वारा फेंके गए दस्ती बम से वह सारा झुलस गया था। उसके चेहरे की खाल बिल्कुल जल गई थी, वह पहचाना भी नहीं जा रहा था। तीसरे दिन फिर पुलिस सुपरिटेंडेंट यहाँ आए और उन्होंने बताया कि दस्ती बम से जल जाने वाला व्यक्ति शेरसिंह ही था, जिसकी लाश को उसकी पत्नी और साले ने लखनऊ में पहचाना है। पुलिस सुपरिटेंडेंट अपने साथ इन्सपेक्टर जनरल आफ पुलिस का कैप्टेन साहब के लिए एक प्रशंसा पत्र लाए थे, जो बाकायदा जलसा करके मुराद महल में ही उन्हें दिया गया। और देखो... वह है प्रशस्ति पत्र।'

श्यामा ने शीशे और चौखटे में जड़े एक पत्र की ओर संकेत किया जो दीवार पर टंगा था।

मैंने उठ कर वह पत्र देखा। उस पत्र में इन्सपेक्टर जनरल आफ पुलिस ने कैप्टेन को व्यक्तिगत रूप से धन्यवाद दिया था और सूचित किया था कि उन्होंने राष्ट्रपति से सिफारिश की है कि वह उन्हें 'पद्म श्री' की उपाधि से विभूषित करें।

- 'देखा?' श्यामा ने मुझसे पूछा।

- 'जी भाभी जी।' अनायास ही मेरे मुख से श्यामा के लिये नया सम्बोधन निकल पड़ा।

- 'बैठो... तुमने मठरी तो चखी ही नहीं, नमकपारे भी वैसे के वैसे ही रक्खे हैं।' पारिवारिक माधुर्ययुक्त होकर श्यामा ने विषय से अलग बात कही-'लगता है यों ही दिखाने के लिए भाभी कह दिया है। मन से मानते तो क्या खाने-पीने में ऐसा परहेज करते?'

बात हँसने की थी... परन्तु मैं हँसा नहीं। चाहता था कि इस परिवार के

प्राणियों पर जो दुख का भार है, उसका कुछ अंश उनसे बांट लूं। तथापि मैंने सहज नम्रता से कहा-'परहेज जैसी कोई बात नहीं है। खाने बैठा हूँ तो खाऊंगा ही। कृपया आप सुनायें कि इसके बाद क्या हुआ?'

- 'इसके बाद...!' गम्भीर और भारी स्वर में श्यामा ने कहा- 'इसके बाद

जो हुआ वह कल्पना से भी भयानक है। महल के दरवाजे पर समस्त गाँव ने भेड़िया खड़ा देखा।'

- 'भेड़िया !' विस्मय से मैंने पूछा।

- 'हाँ... खूनी भेड़िया। इस गाँव में अकेले कैप्टेन ही शिकारी थे। उस दिन कुछ सीढ़ियां चढ़ कर कैप्टेन ने तीन फायर किये। भेड़िया दरवाजे पर ही ढेर हो गया। परन्तु जब कैप्टेन सीढ़ियां चढ़ कर ऊपर पहुँचे... तो वहाँ न भेड़िया था, न उसका कोई चिन्ह। गाँव के कई और व्यक्ति कैप्टेन के साथ थे, तुम्हारे भैया भी थे।' यहाँ श्यामा का संकेत अपने पति तथा उमा के भाई मेघराज की ओर था-'सारा महल छान मारा, परन्तु मृत भेड़िये का एक बाल तक भी नहीं मिला।'

- 'यह भी तो हो सकता है कि भेड़िया मरा न हो, और घायल होकर भाग गया हो ?'

- 'भागता तो खून की बूंदें तो मिलतीं?'

- 'यह आवश्यक तो नहीं है भाभी जी। संभव है कि यह केवल भ्रम ही रहा हो कि भेड़िया घायल हुआ है। ऐसी भी तो सम्भावना हो सकती है कि गोली उसे लगी ही न हो, केवल धमाके की आवाज सुन कर ही वह भाग गया हो।'

श्यामा ने मेरी बात को महत्व नहीं दिया। बोली- 'हो सकता है! जिस भेड़िये को दिन भर कैप्टेन तलाश करते रहे, वह आधी रात को इस कमरे में प्रकट हुआ। उधर उस कोने में कैप्टेन का पलंग बिछा हुआ था। इतने

जीवट के आदमी थे मेरे श्वसुर कि बिना चीखे पुकारे वह कई मिनट गहरी नींद से जागने के बावजूद भेड़िये से उलझते रहे और...।'

स्मृति की विषमता ने श्यामा के भरे हुये चेहरे पर विषाद की परछाई डाल दी थी। लड़खड़ाये से स्वर में वह बोली-'और उन्होंने समझा कि भेड़िया उनसे परास्त होकर जा रहा है। भेड़िये ने दरवाजे के बाहर छलांग लगाई, उसी क्षण वह लोप हो गया और उसके स्थान पर वहाँ डाकू शेरसिंह खड़ा मुस्करा रहा था। जो जाने कब का जल कर राख हो चुका था, सहज स्वर में कैप्टेन से प्रेत

ने कहा-'तुझसे बदला लूंगा... तेरी सात पुश्तों से बदला लूंगा। अब गोलियां मुझ पर असर नहीं करेंगी, मैं प्रेत हूँ... शेरसिंह का प्रेत !'

मैं एकबारगी भय से कांप गया।

श्यामा आंचल के छोर से अपनी आँखें पोंछ रही थी।

अजीब सी हालत हो गई मेरी। कुछ क्षण तो इतना भयभीत रहा कि दृष्टि उठा कर मुराद महल की ओर देखने का साहस भी न कर सका।

सम्भवतः मन का भार हटाने के लिए ही श्यामा कुछ क्षण बाद विषय बदल कर बोली-'भैया तुमने चाय पीना फिर बन्द कर दिया ?'

-'कृपया आप यह बताइये भाभी जी कि फिर क्या हुआ?'

- 'शेरसिंह के प्रेत को देख कर कैप्टेन साहस गंवा बैठे और जोर से चीख कर बेहोश हो गये। उनकी चीख सुन कर सबसे पहले मेरी आँखें खुली। तुम्हारे भैया सहित जब मैं इस कमरे में आई तो वह जमीन पर बेहोश पड़े थे। होश में आने पर उन्होंने ही नहीं, गाँव के पचासों व्यक्तियों ने देखा कि महल के दरवाजे पर पूर्ववत भेड़िया बैठा है। केवल टार्चों की मन्दिम रोशनी में ही कैप्टेन उस समय गोली चलाना चाहते थे... परन्तु सभी ने उन्हें वैसा करने से रोक दिया।'

मैंने दिवंगत कैप्टेन के चित्र पर दृष्टि उठाई। अनायास मुँह से निकला-'कैप्टेन सचमुच साहसी थे।'

श्यामा बोली- 'हाँ, वह असीम साहसी थे और साहस ही ने तो उनके प्राण ले लिये। वह खत पुलिस के पास है जिसे वह उस घटना की तीसरी रात अपने सिरहाने छोड गये थे। उसमें उन्होंने लिखा था कि मैं अपनी परसों की कायरता पर लज्जित हूँ। मुझे संघर्ष करना चाहिये था, कायर की तरह बेहोश नहीं होना चाहिए था। उसी कायरता का प्रतिकार करने मैं मुराद महल के अन्दर इस आशा से जा रहा हूँ कि अगर संसार में प्रेत का अस्तित्व है तो भी प्रेत मानव से अधिक शक्तिशाली नहीं हो सकता। मैं उससे निपटने जा रहा हूँ। अगर न लौट सकूं... तो समझना यह भी एक मोर्चा था जिस पर मैंने वीरगति पाई...।'

- 'इसके बाद...?' उत्सुकता से मैंने पूछा।

- 'इसके बाद वही हुआ भैया जो होना था। प्रातः काल हम सब घबराये से उनकी चिट्ठी को देख ही रहे थे कि वैसे ही चरवाहे ने आकर बताया कि

उनकी क्षत विक्षत लाश मुराद महल की सीढ़ियों पर पड़ी है। शरीर के अनेकों हिस्सों

पर से माँस गायब था, डाक्टरी रिपोर्ट में बताया गया कि मनुष्य ने नहीं हिंसक भेड़िये ने उनकी हत्या की है। लो... वह बीबी जी भी आ गईं !'

उमा अपने साथ एक बूढ़े से व्यक्ति को लेकर आई। वृद्ध छतरी लगाये हुए थे, परन्तु उमा ने अभी तक गीले कपड़े नहीं बदले थे।

उमा ने वृद्ध का परिचय दिया- 'यह हैं दादा दीपचन्द। ये गाँव के सरपंच हैं। आप इनसे बातें कीजिए... मैं कपड़े बदल कर अभी आती हूँ।'

स्वर्गीय कैप्टेन के ठाठ शहरी थे। उनके बेटे को तो अभी मैंने देखा नहीं था, परन्तु उनकी पुत्र वधु श्यामा बात-चीत से पढ़ी-लिखी प्रतीत होती थी। और बेटी उमा का चित्र इस बात का प्रमाण था कि वह विश्वविद्यालय की स्नातक है।

फिर भी शायद भाग्य की ही बात थी कि कैप्टेन ने अपना पुश्तैनी गाँव का मोह नहीं छोड़ा और इसी मोह यज्ञ में उनकी आहुति भी हो गई।

वृद्ध को देख कर ग्रामीण समाज के शिष्टाचार अनुसार श्यामा घूंघट निकाल कर अन्दर चली गई। उमा को कपड़े बदलने जाना ही था।

मैंने उठ कर वृद्ध को अपना परिचय दिया- 'जी मेरा नाम प्रमेन्द्र है, दिल्ली का रहने वाला हूँ और पुरातत्व विभाग में असिस्टेन्ट इन्जीनियर के पद पर अभी नौकरी पर आया हूँ।'

- 'ठीक है बेटा, बैठो। तुम तो मेरे पोते के समान हो, जब बिटिया ने आकर बताया कि तुम अकेले महल में जाने की सोच रहे हो... तो मैं एक क्षण भी नहीं रुका, फौरन चला आया। बिटिया कहती थी कि अगर तुम महल के अन्दर नहीं जाओगे तो तुम्हारी नौकरी छूट जायेगी?'

नौकरी...!

वृद्ध सरपंच ने जैसे मेरी दुखती रग पर हाथ रख दिया। पूरे साल की भाग-दौड़ के बाद कहीं यह नौकरी मिली थी। वृद्ध पिता जी इसी माध्यम से बहू का मुँह देखना चाहते थे।

अनजाने ही मुख से निश्वास निकल गई। मैं बोला- 'समझ में नहीं आता कि क्या करूं? एक नौकरी छोड़ कर दूसरी ढूँढ लेना आज-कल के जमाने में

भगवान को पा लेने से भी कठिन काम है। फिर यह तो मेरी नौकरी का पहला काम है।'

बेटा ?' सहानुभूति सूचक स्वर में वृद्ध ने कहा-'मेरी लिखत से काम नहीं चलेगा

--'जी...?'

-'हाँ हाँ... कोट मुराद गाँव की पंचायत हुई थी, उसमें दरोगा जी भी मौजूद थे। पंचायत में फैसला हुआ था कि मुराद महल पर न कोई आदमी चढ़ेगा, न किसी पशु को चढ़ने दिया जायेगा। मैं तुम्हें लिखत में दे दूंगा कि मैंने तुम्हें महल में नहीं जाने दिया। सरपंच की लिखत को तो कचहरी भी मानती है।'

वृद्ध की आयु थी लगभग पचहत्तर वर्ष। पुराने जमाने के सीधे और सरल आदमी थे बेचारे। उनका जमाना वह जमाना था जब साधारण पुलिस मैन सरकार और पटवारी कचहरी होता था।

मैंने उन्हें यह नहीं बताया कि पुरातत्व विभाग के आधीन इमारतों पर किसी हुक्म को चलाने का अधिकार केवल विभाग के डायरेक्टर जनरल को ही है। पुलिस अथवा ग्राम पंचायत को कोई अधिकार नहीं है कि वह उन इमारतों के विषय में कोई नियम बनायें।

परन्तु अब मैंने निश्चय कर लिया था कि मैं महल में प्रवेश नहीं करूंगा। मैं नौकरी की बाजी लगाने के लिए तत्पर हो गया था।

- 'ठीक है... आप लिख कर दे दीजियेगा। अफसर मानेगा तो मान लेगा, नहीं तो ज्यादा से ज्यादा अपनी नौकरी ले लेगा। मैं वर्षा रुकते ही लौट जाऊंगा। अच्छा बाबा जी, कैप्टेन साहब की मृत्यु के बाद तो गाँव में कोई

दुर्घटना नहीं हुई ?'

- 'ईश्वर की कृपा से नहीं हुई। यूं कभी-कभी अब भी रात-बिरात को प्रेत दिखाई पड़ जाता है। कभी अपने असली रूप में... कभी भेड़िये के रूप में। कई बार भेड़िये को गाँव में घूमता हुआ भी देखा गया। परन्तु यज्ञ करा दिया गया था न, फिर प्रेत ने किसी को नुकसान नहीं पहुँचाया।'

- 'यज्ञ...?' उत्सुकता से मैंने पूछा।

-'हाँ हाँ बेटा ! मुरादाबाद के पंडित ब्रह्मानन्द का नाम तो तुमने सुना होगा ! प्रेत विद्या के बड़े जानकार हैं, प्रेत को वश में करने की विद्या में पारंगत

हैं। उन्हें बुलवा कर यज्ञ करवाया, भैरों महाराज पर चढ़ कर प्रेत बोला। पहले तो कहने लगा कि कप्तान की सात पुश्त से बदला लूंगा। परन्तु अपने ब्रह्मानन्द पंडित भी कम नहीं थे। प्रेत को तभी छोड़ा जब उसने कप्तान के खानदान को माफ कर दिया।'

एक बात भी ऐसी नहीं थी जो गले से नीचे उतर सके। परन्तु इसके अतिरिक्त और कोई चारा भी तो नहीं था कि जो कुछ मुझसे कहा जा रहा है, उसे इच्छा न होते हुए भी स्वीकार करता रहूँ। मेरा मन बुरी तरह भयभीत था... मस्तिष्क के तर्क मन को स्वीकार नहीं थे।

मैंने सरपंच महादय की बात मान ली। हालांकि मैं जानता था कि मेरे विभाग में सरपंच की लिखत का कोई मूल्य नहीं होगा। मस्तिष्क कहता

था कि व्यर्थ के भ्रम में पड़ कर नौकरी गवांना मूर्खता है। परन्तु जो कुछ सुना था, उसे सुन कर मेरा साहस जवाब दे गया था। महल में प्रवेश करने की बात तो दूर... अब मुझमें महल की सीढ़ियां चढ़ने का भी साहस शेष नहीं था।

वृद्ध महोदय को उमा इसी उद्देश्य से साथ लाई थी। कहते हैं न कि दूध का जला छाछ को फूंक-फूंक कर पीता है। उमा और उमा के परिवार की मेरे प्रति सहानुभूति का कारण स्वयं उनकी आन्तरिक पीड़ा थी।

चलते-चलते वृद्ध महोदय बोले- 'और बेटा... तुम विश्वास रक्खो, तुम्हारी नौकरी कहीं जाने वाली नहीं है। कैप्टेन का बेटा है मेघराज वकील। वह तो कहता है कि तब चैन लूंगा, जब मुराद महल पर बम डलवा दूंगा। जब से कप्तान मरा है, उसने नई दिल्ली के बीसियों फेरे कर लिए हैं। अब भी वहीं गया हुआ है। उमा बिटिया बता रही थी कि आज वह आने वाला है। उससे मिल कर जाना। बड़े-बड़े कानूनी नुक्ते याद हैं उसे। कोई गैर तो है नहीं, जरूरत हुई तो वह तुम्हारी मदद करेगा।'

इसके बाद वृद्ध चले गये और मैं कमरे में अकेला रह गया।

सोचने के लिए केवल एक ही विषय था... कप्तान की मृत्यु का रहस्य क्या है?

कुछ देर बाद ही एक बच्चा आया, जो अपने कपड़ों में छिपा कर सरपंच की साक्षी का कागज लाया था। मैंने उसे संभाल कर रख लिया, यह जानते हुए भी कि उसका मेरे विभाग पर कोई असर नहीं पड़ेगा।

श्यामा और उमा को गए काफी देर हो चुकी थी। श्यामा जो मेरे लिए चाय और नाश्ता लाई थी, वह लगभग ज्यों का त्यों मेज पर रक्खा था। यहाँ की बातों ने खाने-पीने की रुचि ही नष्ट कर दी थी।

सोच रहा था कि लखनऊ पहुँचते ही नौकरी से तो जवाब मिल ही जाएगा।

क्या कहूँगा दिल्ली जाकर पिताजी से? नौकरी का समाचार सुन कर कितनी प्रसन्नता हुई थी उन्हें ! नौकरी छूट जाने का समाचार किस मुँह से कहूँगा मैं।

इसी उधेड़-बुन में था कि आहट पाकर चौंका। उमा कमरे में प्रविष्ट हुई थी। गीले केश पीछे कमर पर फैले हुए थे। श्वेत परिधान... शालीन मुखमुद्रा !

देख कर मन में विचित्र सी अनुभुति हुई।

- 'आपके लिए खाना बन रहा है। स्नान की व्यवस्था भी अभी हुई जाती है। आप भोजन करके विश्राम करें। देखो न... कम्बख्त पानी है कि रुकने का नाम ही नहीं लेता। मुझे जरा स्टेशन तक दोबारा जाना है। पहली गाड़ी तो निकल ही गई है, भैया निश्चय ही इस गाड़ी से आ जाएंगे।'

मैं उठा। बोला- 'व्यर्थ अतिथि का भार अपने ऊपर मत ओढ़िए उमा जी। यहाँ की बातें सुन कर अब तो मैं इतना भयभीत हो गया हूँ कि मुराद महल की ओर दृष्टि उठा कर भी नहीं देख सकता। कृपया मुझे स्टेशन साथ ही ले चलिए।'

- 'न न, ऐसे जाना नहीं होगा। भैया को आ लेने दीजिए। संभावना यह है कि वे अपने साथ किसी बड़े अधिकारी को नई दिल्ली से लाएंगे। मुराद महल की जांच न करने का आपको कोई ठोस कारण भी चाहिए... वह मिल जाएगा।'

मैंने उमा की ओर देखा। मन में गुदगुदी सी हुई। एक स्वाभाविक कल्पना ने मुझे पुलकित कर दिया। काश... उमा मेरी ब्याहता हो सकती !

प्रकट में मैंने कहा- 'आपके सौहार्द का बहुत-बहुत धन्यवाद ! जो होगा सो देखा जाएगा, परन्तु मैं अब रुकना नहीं चाहता।'

- 'क्यों...?' सहज भाव से उसने पूछा।

- 'रुकने से कोई लाभ भी तो नहीं है। पुलिस विभाग का बड़े से बड़ा अफसर भी मेरा कोई हित नहीं कर सकेगा। जब तक मैं यहाँ रहूँगा, उलझनों में ही उलझा रहूँगा।'

-'ऐसा ही होता है बाबू साहब ! दूसरों की उलझन में कोई उलझे भी तो

क्यों? आप सोच रहे होंगे कि हमारी विपत्ति कहीं आपको भी व्यर्थ की मुसीबत में न फंसा दे ! न न... मैं आपसे रुकने के लिए नहीं कहूँगी। चलिए।'

कैसा उलाहना था वह !

मेरा रोम रोम जैसे किसी तेज नोक वाले तीर से बिंध गया। उत्तर देते न बना मुझसे। बिल्कुल ठीक समझा था उमा ने मेरी भावना को। माना कि मेरे अन्तर में भी भय समाया हुआ था, परन्तु भय से अधिक मैं उस मनहूसियत से ऊब गया था जो यहाँ के वातावरण में व्याप्त थी।

मैंने झूठ बोला। निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि क्यों?

शायद उमा का मन रखने के लिए मैंने कहा- 'आप गलत समझी हैं। मेरे कहने का आशय यह था कि मैं अपनी उलझनों के कारण परेशान रहूँगा। देखिए न, इससे बढ़ कर उलझन और क्या होगी कि नौकरी मिलने से पहले ही छूट जाए? खैर, अगर आप चाहती हैं कि यहाँ रुकूं तो रुक जाता हूँ। कम से कम यह तो मैं हर्गिज नहीं चाहूँगा कि आप मेरे विषय में कोई गलत राय कायम करें।'

मुसीबत और परेशानियों में भी इन्सान मुस्कराता है। प्रमाण थी उमा। अधरों पर मुस्कान लाते हुए उसने कहा-'मैं आपके बिषय में कोई गलत राय कायम नहीं करूंगी।'

- 'धन्यवाद ।

-'अगर आवश्यक समझें तो चलने से पहले भाभी जी से विदा ले लें।'

- 'आप जाएं। फिलहाल मैं नहीं जा रहा हूँ। अब तो आपके भाई साहब से मिल कर ही जाऊंगा।'

- 'प्लीज चलिए। सोचने-समझने के बाद मैं इस निश्चय पर पहुँची हूँ कि

आपका चलना ठीक ही होगा। यह बात अब ध्यान में आई कि इस ट्रेन के बाद लखनऊ के लिए दूसरी ट्रेन नहीं मिलेगी।'

- 'न मिले... कल चला जाऊंगा।'

कुछ कहते न बने... ऐसे स्वर में उसने कहा- 'आप तो व्यर्थ जिद कर रहे हैं। अपना दोष स्वीकार करती हूँ। दरअसल पिताजी की मृत्यु के बाद मेरा परिवार इतना रोया है कि अब रोते-रोते थक चुका है। अब रोने को नहीं, हँसने को मन करता है। कोई आ जाता है तो मन कुछ देर बहल जाता है। परन्तु यह तो हुआ हमारा निजी स्वार्थ। भला कैसे कहा जा सकता है कि हमारा परिवार

संकटमुक्त हो चुका है? कौन जाने किस क्षण हम पर विपत्ति टूट पड़े ? मैं अपने शब्द वापस लेती हूँ और हाथ जोड़ कर निवेदन करती हूँ कि आप चलिए।'

- 'घर से निकाल देना चाहती हैं?'

- 'चाहें तो यही समझ लें।'

- 'अगर मैं निकलने से इन्कार कर दूं तो...?'

-'आप व्यर्थ की बातें कर रहे हैं।'

-'आप बात को टाल रही हैं। अच्छा... मैं आपकी ओर से अपनी बात का उत्तर देता हूँ। मैं स्वीकार करता हूँ कि मेरे घर से न निकलने पर आप मुझे जबरन घर से निकलवा देंगी। ऐसी स्थिति में मुझे घर से निकल जाना ही होगा। परन्तु इसके बाद मैं यह कहना चाहूँगा कि आपके घर से निकल जाने पर भी माँगने से मुझे किसी दूसरे के घर में सहारा मिल सकता है।'

तनिक परेशान सी होकर उमा बोली- 'परन्तु आप रुकना चाहते क्यों हैं?'

- 'सिर्फ इसलिए कि आपने मुझे गलत समझा है।'

- 'मैं क्षमा माँग रही हूँ।'

- 'आप मुझे शर्मिंदा कर रही हैं जबकि वास्तव में मेरा कोई दोष नहीं है। उमा जी माना कि मेरी और आपकी स्थिति में जमीन-आसमान का अन्तर है, परन्तु इन सब बातों के बावजूद मैं भी आपकी तरह इन्सान हूँ। किसी को हल्की सी ठेस पहुँचने से मुझे भी दुख होता है, इसलिए कि यदि कोई मुझे ठेस पहुँचाए तो उसे सहने के लिए मुझे अपनी बहुत सी शक्ति लगानी पड़ती है। चाहे जो हो... कुछ ही घन्टों की पहचान के बावजूद मैं अपनी हितैषी मित्र को यह अवसर नहीं दूंगा कि वह मुझे गलत समझे।'

उमा से कोई उत्तर न बना।

- 'लीजिए... अब मैं मतलब की बातों को तूल देता हूँ। फरमाइए, मैं यहाँ रह सकता हूँ या मुझे दूसरा ठिकाना तलाश करना चाहिए?'

- 'आपका घर है।'

-'धन्यवाद !' मैं हँसा-'घर तो आप ही का है, मैं तो ऐसा अतिथि हूँ जो अनजाने ही भार बन गया हूँ आपके परिवार पर। अलबत्ता आप सदा याद रहेंगी।'

-'में?'

- 'जी।'

-'शायद मैं मूर्ख हूँ... इसलिए?'

-'मूर्ख आप नहीं हैं। आप आवश्यकता से अधिक चतुर हैं। इतनी चतुर कि विवाह होने पर पति के लिए एक समस्या रहेंगी।'

मैंने यह बात जान-बूझ कर कही थी। सुन कर वह कुछ लजाई, साथ ही कुछ हँसी भी। परन्तु मेरे कथन का बुरा उसने नहीं माना।

- 'तो फिर मैं जाऊं ?'

- 'शौक से ।'

- 'उम्मीद है भैया को साथ लेकर लौटूंगी। और मुझे यह भी उम्मीद है कि उनके आने पर आपकी समस्या का कोई संतोषजनक समाधान भी निकल ही आएगा।'

- 'मुझे अब अपनी समस्या की चिन्ता नहीं है।'

-'आपकी समस्या की मुझे चिन्ता है। अगर सचमुच कोई साधन नहीं निकला तो मुझे जीवन भर इसका खेद रहेगा कि स्टेशन पर उतर कर आपने मेरी सूरत देखी थी, फलस्वरूप आपकी नौकरी संकट में...?'

-'नौकरी एक छोड़ कर दूसरी मिल जाएगी, परन्तु आपकी सूरत...!'

मैं अपना वाक्य पूरा नहीं कर भी पाया था कि सामने गलियारे में उमा की कार के निकट ही एक दूसरी कार आकर रुकी।

- 'मिस्टर मेघराज एडवोकेट का मकान यही है?' कार में बैठे एक व्यक्ति ने पूछा।ने पूछा।

- 'जी हाँ। आइए... तशरीफ लाइए।' उमा आगे दरवाजे पर जाकर बोली।

कार में से दो व्यक्ति उतरे। उनमें से एक तनिक भारी बदन का व्यक्ति था और दूसरा गंभीर और पैनी दृष्टि वाला इकहरे बदन का व्यक्ति था, जो देखने में फिल्म ऐक्टर सा प्रतीत होता था।

भारी बदन वाला व्यक्ति दरवाजे तक आया, विदूषक की भांति झांक कर कमरे को अन्दर से देखा।

- 'कहाँ हैं वकील साहब ?'

उमा ने उत्तर दिया-'जी मैं उन्हें लाने स्टेशन जा रही हूँ। निश्चित रूप से वह पैसेन्जर ट्रेन से आ रहे हैं। आप बाहर क्यों खड़े हैं... अन्दर तशरीफ लाइए। मेरा नाम उमा है, मैं उनकी बहन हूँ।'

वह भरे बदन वाला व्यक्ति बोला-'मेरा नाम जयन्त है। केन्द्रीय खुफिया विभाग का जासूस हूँ। यानि कि यह भी कोई बात हुई कि मैं यहाँ आऊं और वकील साहब गायब मिलें ! वही मसल हुई कि मुद्दई सुस्त और गवाह चुस्त ! आखिर वकील साहब यहाँ मौजूद क्यों नहीं हैं, जबकि मैं नई दिल्ली से यहाँ तक लगातार धूल फांकता चला आ रहा हूँ?'

उमा कुछ कहने जा ही रही थी कि जयन्त के साथ आए दूसरे व्यक्ति ने जयन्त के कंधे पर हाथ रख कर शांत स्वर में कहा-'धूल फांकने की कहावत इस मौसम में नहीं चल सकेगी मिस्टर जयन्त ! और फिर इस बेचारी लड़की के सामने तुम्हारा रौब देना बिल्कुल वैसा ही है जैसे किसी भले आदमी के पीछे कुत्ते का भौंकना। बहन, तुम इन सज्जन की बातों का बुरा मत मानना। कुछ तो ये आदत से लाचार हैं और कुछ सुबह से अब तक इन्होंने कई सौ मील कार ड्राइव की है। पैट्रोल की गंध लगता है इनके दिमाग तक जा पहुँची है। हम लोग वकील साहब की रिपोर्ट के आधार पर यहाँ आए हैं... अपना काम समाप्त करके हम लौट जाएंगे। कतई आवश्यक नहीं है कि वकील साहब हमें मिलें ही। अगर वर्षा न होती तो हम आपको कष्ट भी नहीं देते। परन्तु अब तो कुछ देर यहाँ बैठना ही होगा। अपना परिचय दूं... मुझे राजेश कहते हैं।'

सरकारी जासूस राजेश को भारत का प्रत्येक अखबार पढ़ने वाला जानता है। मैंने भी अखबारों में उनके अनेकों कारनामे पढ़े थे। परन्तु कल्पना थी कि राजेश अनुभवी बूढ़े जासूस होंगे... एकबारगी विश्वास नहीं हो सका

कि यही ख्याति प्राप्त जासूस राजेश हैं !

वह मेरी ओर देख कर बोले- 'मिस्टर... आपका ही परिचय शेष रह गया है ?'

-'जी मेरा नाम प्रमेन्द्र है... दिल्ली का रहने वाला हूँ और कल ही लखनऊ के पुरातत्व विभाग में असिस्टेन्ट इंजीनियर की नौकरी आरम्भ की है। पहला काम मिला है मुराद महल की स्थिति की रिपोर्ट विभाग को दूं।'

-'अरे!' राजेश चौंके-'तो इसका अर्थ यह हुआ कि आप मुराद महल में हो आये ? तब तो...!'

-'जी नहीं, मैं आज सुबह ही आया हूँ और कैप्टेन परिवार से जो कुछ सुना है, उसे सुन कर अब तो उसकी ओर आँख उठा कर देखने का भी मेरा साहस नहीं है।'

राजेश ने गौर से मुझे देखा- 'आपने जो कुछ सुना है, आप उस पर विश्वास करते हैं?'

- 'जी प्रश्न विश्वास का नहीं है, प्रश्न मन की दृढ़ता का है जो कैप्टेन की हत्या का काण्ड सुन कर समाप्त हो चुकी है।'

उमा... जो अब तक चुप थी, आतुरता से वोली- 'आप जानते हैं कि मेरे पिता जी की हत्या कैसे हुई?'

सहज भाव से राजेश ने उत्तर दिया- 'जी हाँ... जानता हूँ।'

- 'जान कर भी अविश्वास करते हैं?'

- 'हाँ, इसलिये कि जो असम्भव है उस पर भ्रम के पर्दे तो हो सकते हैं... परन्तु असम्भव सम्भव नहीं हो सकता।'

- 'मैं समझती हूँ कि घटना की आपको पूरी जानकारी नहीं है।'

--'जानकारी सम्बन्धी मेरा कोई विशेष दावा है भी नहीं। मेरे पास दो व्यक्तियों द्वारा दिए गए घटनाओं के ब्योरे हैं। एक ब्यौरा वह है जो आपके भाई मिस्टर मेघराज ने दिया है। और दूसरा वह है जो यहाँ के पुलिस स्टेशन इन्चार्ज ने दिया है।'

- 'फिर भी आप विश्वास नहीं करते ?'

- 'नहीं... और वह इसलिए कि पानी कभी मिट्टी के तेल का काम नहीं कर सकता। हालांकि दोनों ही का उदगम स्थान धरती है। जब हम सिद्धान्त के रूप में यह मान लेते हैं कि प्रेतों का अस्तित्व संसार में नहीं है... तब विश्वास करने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता।'

जाहिर है राजेश की बात को उमा तर्क द्वारा नहीं काट सकती थी, एक उसांस भरते हुए उसने कहा- 'काश आप यहाँ होते जब वह घटना घटी, तब सिद्धान्त की अर्थी उठ गई थी।'

परन्तु राजेश पर उमा की इस आह का भी कोई असर नहीं हुआ। मुस्कराते हुए उन्होंने अपना हाथ बढ़ा कर उमा के सिर पर रक्खा, हल्की

सी थपकी दी-'बहनें सभी को अच्छी लगती हैं। मैं भी अपवाद नहीं हूँ, मुझे भी बहनें बहुत

अच्छी लगती हैं। परन्तु मुझे साहसी बहनें अच्छी लगती हैं। सुनो, देखो...

दुर्घटनाओं पर किसी का वश नहीं होता। जांच के लिए मैंने तुम्हारे पिता कैप्टेन साहब का भी रिकार्ड आर्मी हैड क्वार्टर से निकलवा कर देखा था। कोई सन्देह नहीं कि वह एक वीर पुरुष थे और उनकी मृत्यु भी उनकी वीरता का ज्वलन्त उदाहरण है। मैंने सारे ब्यौरे पुलिस आई. जी. के द्वारा प्राप्त किए हैं। वैसे अभी तक मैं मिस्टर मेघराज से तो साक्षात नहीं कर पाया हूँ, अलबत्ता तुम्हें देख कर मुझे बड़ी निराशा हुई है। तुम एक वीर पिता की पुत्री हो। तुम्हारे लिए यह जानना आवश्यक है कि कोई सैनिक मोर्चे पर वीर गति प्राप्त करता है तो यह दुख की बात अवश्य है, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि केवल इसी दुख में राष्ट्र शत्रु के सम्मुख हथियार रख दे। अन्ध विश्वास इन्सान का सबसे बड़ा शत्रु होता है... तुम्हारे वीर पिता उससे लड़ते हुए अपनी कुर्बानी दे गए, अब तुम्हारा यह भाई उस शत्रु पर विजय प्राप्त करने आया है। मिस्टर प्रमेन्द्र, आपकी क्या राय है?'

एकाएक बात का रुख इस तरह बदल गया कि मैं सकपका सा गया। यूं सुनने में राजेश की बातें अच्छी लग रही थीं, परन्तु उससे परिस्थिति की भीषणता तो कम नहीं हो जाती थी। अतएव मुझे उत्तर देने में कुछ विलम्ब हुआ... केवल कुछ क्षणों का विलम्ब।

एक कारण यह भी था कि मेरी सहानुभूति उमा के साथ थी। अतएव कुछ क्षण बाद मैंने उत्तर दिया- 'आपकी बातें सुनने में अच्छी हैं मिस्टर राजेश, परन्तु इससे कैप्टेन परिवार की समस्या हल नहीं हो जाती।'

उन्होंने पूछा-'क्या समस्या है कैप्टेन परिवार की ?'

उनकी आँखों में एक विचित्र प्रकार की तीक्ष्णता थी... जिससे मैं सहम सा गया।

परन्तु दूसरे ही क्षण मैंने उमा के चेहरे पर दृष्टिपात किया। गम्भीर किन्तु दयनीय मुख मुद्रा थी बेचारी की।

- 'मेरे ख्याल से कैप्टेन परिवार की समस्या है वास्तविक भय। प्रश्न यह है कि अगर कैप्टेन की हत्या प्रेत द्वारा नहीं हुई तो फिर कैसे हुई?'

- 'इसी प्रश्न का उत्तर तो खोजने मैं आया हूँ।'

-'मेरी कामना है कि आप प्रश्न का उत्तर खोजने में सफल हों। परन्तु जब तक आप ऐसा नहीं कर पाते, तब तक यह बेचारी साहस बांधे तो कैसे ?'

उन्होंने मेरी ओर ऐसी दृष्टि से देखा, जैसे मैं व्यस्क पुरुष न होकर नासमझ बच्चा हूँ।

अर्थपूर्ण स्वर में वे बोले-'यह भी तो सम्भव है कि मैं भी रहस्य का पर्दा न हटा सकूं और कैप्टेन की भांति ही सदा सर्वदा के लिए समाप्त हो जाऊं? यह भी तो हो सकता है कि कैप्टेन की मृत्यु का रहस्य उमा के और इनके

भाई के जीवन में काल खुले ही नहीं... तब कैप्टेन परिवार का जीवन कैसे बीतेगा?'

अजीब तर्क था। मैं निरुत्तर सा हो गया। अकस्मात ही उमा को समय का ध्यान आया।

रिस्टवाच देखते हुए उसने पुकारा-'भाभी जी !'

गृहिणी श्यामा ने ड्राईंग रूम में प्रवेश किया।

- 'यह हैं मेरी भाभी जी... श्यामावती। भाभी जी, यह हैं प्रसिद्ध जासूस मिस्टर राजेश।'

दोनों ने एक दूसरे को सम्मान सहित हाथ जोड़े।

- 'और यह हैं आपके साथी श्री जयन्त जी। यह मेरी भाभी जी हैं।'

अजीब सी स्टाइल से जयन्त खड़ा था... बिल्कुल पत्थर के बुत की तरह।

-'नमस्ते !' श्यामा बोली।

जयन्त झुका। जापानी ढंग से सिर झुका कर उसने श्यामा का अभिवादन किया।

बड़ी कठिनाई से श्यामा अपनी हँसी रोक पाई। जयन्त की भाव भंगिमा कुछ इस प्रकार की थी कि उमा के गम्भीर चेहरे पर भी मुस्कान छलक आई।

श्यामा ने पूछा- 'जयन्त जी, लगता है आप कुछ उदास और परेशान हैं?'

- 'जी हाँ।'
-'क्या हमसे कोई गलती हुई?'

- 'जी हाँ। आपके पति वकील साहब से भयंकर गलती हुई है। मुझे अन्दर की आँखों से सब कुछ साफ दिखाई दे रहा है। मेरी कुर्बानी होने वाली है।'

- 'कुर्बानी!' हम सभी चौंके।

-'बेशक... कुर्बानी। मैं बिना माँ बाप का बच्चा यहाँ भेड़िये या प्रेत का नाश्ता बनने के लिए भेज दिया गया हूँ...।'

मुराद महल 33

- 'जयन्त, तुम खामोश नहीं रहोगे?' डपट कर राजेश बोले- 'बारिश तकरीबन रुक चुकी है, गाँव का एक राउन्ड लगा कर आओ।'

- 'हर्गिज नहीं माई डियर राजेश ! समझ लो कि मैं मर चुका हूँ और अब तुम धूम-धाम से मेरे श्राद्ध की तैयारी करो।' इतना कह कर जयन्त कुर्सी पर बैठ गया।

और राजेश झल्ला कर बोले- 'बेवकूफ !'

पिता की मृत्यु के बाद मेघराज ने जो भाग-दौड़ की थी, उसी के परिणाम स्वरूप राजेश और जयन्त कोट मुराद आये थे।

हुआ यह था कि वकील मेघराज की दरख्वास्त जो उसने इन्सपेक्टर जनरल आफ पुलिस को दी थी, तुरन्त ही केन्द्रीय खुफिया विभाग को फारवर्ड कर दी गई। इसके विपरीत मेघराज उस दरख्वास्त की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा लखनऊ में करता रहा। उसका ख्याल था कि दरख्वास्त प्रान्तीय पुलिस को फारवर्ड की जायेगी।

फलस्वरूप कुछ घन्टे पहले ही राजेश और जयन्त पहुँचे। मेघराज को तीसरे पहर उमा कार में लेकर पहुँची।

अपने दिवंगत पिता की भांति ही मेघराज भरे हुए बदन का स्वस्थ युवक था। पिता की मृत्यु से पहले वह जिला अदालत में प्रेक्टिस करता था। परन्तु जब से यह दुर्घटना घटी थी उसने मन में निश्चय कर लिया था कि तभी चैन लेगा जब प्रेत के इस ठिकाने पर कोट मुराद के महल को गिरवा कर उस स्थान पर सपाट मैदान करवा देगा।

अपने प्रार्थना पत्र में उसने लिखा था- 'मैं इस रहस्यमय हत्याकांड पर अपना कोई मत प्रकट नहीं कर रहा हूँ। परन्तु चूंकि पुलिस इस हत्या का प्रयत्न के बाद भी सुराग नहीं पा सकी है, फलस्वरूप मुराद महल को गिरा देना ही मुराद कोट के निवासियों को सुरक्षा की गारन्टी दे सकता है। पुरातत्व विभाग द्वारा संरक्षण प्राप्त इस महल को वर्ष भर में दस से अधिक दर्शक देखने नहीं आते।'

मेघराज का विचार था कि उसका सुझाव मान लिया जायेगा।

परन्तु ठीक इसके विपरीत जब वह घर जाकर उतरा तो श्यामा ने सूचना दी कि गाँव के स्कूल में पंचायत जुड़ी है। मेघराज के साथ उमा भी वहाँ पहुँची।

उमा ने ही मेघराज का परिचय राजेश, जयन्त और मुझ से कराया।

पंचायत के रूप में अच्छी खासी मनोरंजक गोष्ठी ग्राम के स्कूल के हॉल में जुड़ी हुई थी। इलाके के दारोगा को भी बुलवा लिया गया था। एक बार भली प्रकार से राजेश ने ग्रामवासियों की मनोभावना को समझना चाहा था। फलस्वरूप उन्होंने ही प्रोत्साहित किया और गाँव के बुजुर्गों ने अपने ढंग से न केवल कैप्टेन हत्याकांड को सुनाया, बल्कि और भी प्रेतों और भूतों से संम्बन्धित कहानियां सुनाई।

ढेरों हुक्के वहाँ सुलगे हुए थे और प्रेतों की ही मनोरंजक वार्ता चल रही थी।

मेघराज के पहुँचने से गोष्ठी का रुख बदला।

बात मेघराज ने ही आरम्भ की- 'मिस्टर राजेश, मैं समझता था कि यहाँ आपके स्थान पर मुराद महल को गिराने के लिए मजदूरों की टोली आयेगी? उमा ने मुझे आपके आने का अस्पष्ट सा उद्देश्य भी बताया था, परन्तु मैं हैरत में हूँ कि आखिर यहाँ आपको भेजने का उद्देश्य क्या है?'

मुस्कराये राजेश- 'मुझे यहाँ भेजने का उद्देश्य है मुराद महल की रक्षा। हैरत की बात है, आप इस नतीजे पर क्यों पहुँचे कि मुराद महल को गिरा देना ही समस्या का हल है?'

दुखी और परेशान मेघराज को राजेश की बात उपहास के समान लगी-'क्या आपने कोई दूसरा नतीजा निकाला है?'

-'बेशक।' दृढ़ स्वर में राजेश ने कहा-'मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि आपकी समस्या का हल है असली कातिल की खोज। यह बात जुदा है कि कातिल इन्सान भी हो सकता है और पशु भी।'

-'कातिल वह है जिसे पूरे गाँव ने देखा है...।'

राजेश ठहाका मार कर हँसे।

ग्रामीण बुजुर्ग स्तब्ध रह गए।

-'कभी-कभी आँखें भी भ्रम की शिकार हो जाती हैं वकील साहब !'

मनमुराद पैलेस 35

- 'आप यह कहना चाहते हैं कि पूरा गाँव भ्रम का शिकार है?' मेघराज के स्वर में तेजी थी।

राजेश ने ऐसे मेघराज के कंधे पर हाथ रखा, जैसे दोस्ती पुरानी होने के कारण बेतकल्लुफी हो-'अगर मैं कहूँ हाँ... तो ?'

- 'तो मैं समझुंगा कि आप हमको मूर्ख बनाने के लिए आये हैं।'

राजेश का स्वर शान्त एवं शिष्ट था- 'यह मेरा पेशा नहीं है। अलबत्ता इन उपस्थित बुजुर्गों से क्षमा चाहते हुए मैं यह अवश्य कहूँगा कि यह सब बूढ़े और जवान भी मूर्खता के रोग से ग्रस्त हैं। यह जो सज्जन बैठे हैं... इन्होंने मुझे बताया है कि गाँव के श्मशान में एक सिर कटा जिन रहता है। इनका कहना है कि इन्होंने उस जिन को अपनी आँखों से देखा है और उसी जिन ने किसी ग्वाले को मारा भी है। यह दूसरे बुजुर्ग बैठे हैं... इनका कहना है कि यहाँ कोई शिवाला है और उसके पास जो पीपल का पेड़ है, वहाँ खून पीने वाली प्रेतनी रहती है। उसी के प्रभाव से इनके अनुसार गाँव के कितने ही बच्चे मौत के घाट उतर चुके हैं। ये मेरे विचार से गाँव के सबसे बुजुर्ग आदमी हैं। क्या आयु है बाबा तुम्हारी ?'

जिस बूढ़े व्यक्ति को सम्बोधित करके राजेश ने संकेत किया था, वह बोला-'दो ऊपर सौ।'

बात झूठ भी प्रतीत नहीं होती थी। बूढ़े की आँखों में एक ठहराव सा था, भवों और कानों तक पर उगे बाल सफेद हो गए थे !

राजेश फिर बोले-'इन बाबा का कहना है कि नहर की पुलिया पर एक प्रेत रहता है। वह महीने की हर अमावस को एक काले बकरे की भेंट लेता है। जिस महीने में भेंट न दी जाए, उस महीने पुलिया से गुजरने वाली बैल गाड़ियों और घोड़ा गाड़ियों को उलट कर नहर में डाल देता है। अगर इनकी बात सच मानी जाए तो इनके देखते-देखते वह प्रेत दर्जनों स्त्री पुरुषों को नहर में डुबा कर मार चुका है। और भी कई कहानियां मुझे

सुनाई गई हैं। अगर आपकी राय पर अमल किया जाए तो नहर पाट देनी चाहिए, जिससे न केवल आपके गाँव की... बल्कि पूरे डिवीजन की सिंचाई होती है। वह पीपल गिरा दिया जाए और श्मशान जोत कर खेत बना दिया जाए। सोचने की बात यह है कि गाँव के मुर्दे फिर कहाँ जलाइएगा?'

- 'आप यही कहना चाहते हैं न कि मुराद महल नहीं गिराया जायेगा?'

-'मुराद महल नहीं गिराया जाना चाहिये, ऐसी मेरी व्यक्तिगत राय है। हालांकि इसे कायम रखने अथवा गिराने की आज्ञा देना मेरे अधिकार में नहीं है।'

मेघराज चिढ़ सा गया- 'अधिकार क्षेत्र में शायद हम लोगों का मजाक बनाना ही है?'

- 'मैं आपके दुख में दुखी हूँ वकील साहब... कृतज्ञ भी हूँ। जब आया था बड़े जोरों की वर्षा हो रही थी। आपके घर में न केवल कुछ समय आसरा पाया, बल्कि नाश्ता भी किया। परन्तु मजबूरी है कि मैं उन अन्ध विश्वासों का समर्थन नहीं कर सकता, दुर्भाग्य से जिनके आप सब शिकार हैं। मैंने आप सबको इसलिए कष्ट दिया है कि मेरे लिए आपके मन की बात जानना जरूरी था। आप विश्वास कीजिये... मैं उस समय तक इसी गाँव में रहूँगा जब तक कि आपके पिता के कातिल का पता नहीं लग जाता। मैं न केवल इस गाँव में रहूँगा... बल्कि मुराद महल के अन्दर रहूँगा।'

स्तब्ध हो गये सभी... मेघराज भी अपवाद नहीं था।

मुझे ऐसा लगा जैसे मिस्टर राजेश किसी दूसरे को मूर्ख बनाने के बजाय खुद मूर्ख बन रहे हैं!

मेघराज का स्वर अब खेदपूर्ण था। उसने कहा- 'इन सब व्यक्तियों के सम्मुख मैं कह रहा हूँ कि इस दुस्साहस के लिए मेरा आग्रह नहीं है।'

- 'आपका आग्रह मानना मेरे लिए जरूरी भी नहीं है।' राजेश का उत्तर उपेक्षापूर्ण था।

चूंकि राजेश पुलिस दारोगा के रैंक के अनुसार उसके आफीसर थे, इसलिए दारोगा चुपचाप एक ओर गम्भीर बना बैठा था।

अब वह उठा। राजेश के निकट आकर उसने बाकायदा पुलिस ढंग से सैल्यूट किया।

- 'क्या बात है?'

-'साहब, मैं पन्द्रह साल से इसी थाने में हूँ।'

- 'तो फिर...?'

- 'महल का वाकया सही है। सोच समझ कर ही उसमें आना-जाना रोका गया है।'

यहाँ मैंने एक बात नोट की। आम बात-चीत में राजेश इतने सरल थे कि

यह सोचना भी अजीब सा लगता था कि वह केन्द्रीय खुफिया विभाग के आफीसर रैंक के जासूस हैं।

परन्तु गर्व और अभिमान की रेखायें अब उनके चेहरे पर स्पष्ट रूप से खिंच गई थीं। ऐसी दृढ़ दृष्टि कि मातहत के पेट में पानी हो जाए।

- 'तुम्हारा नाम क्या है?' कटु और रूखे स्वर में राजेश ने पूछा।

- 'जोरावर सिंह।'

- 'जोरावर सिंह नाम का क्या मतलब समझते हैं?'

दारोगा चुप।

-'जोरावर का मतलब हुआ बहुत ज्यादा जोर वाला, और सिंह का मतलब है शेर... ज्यादा जोर वाला शेर। समझे... ऐसे गुण हैं तुममें ?'

बेचारे दारोगा जी फिर चुप। खूब मोटे और थोड़े थुल-थुल दारोगा जी के मन पर सचमुच बुरी बीती होगी। अभी अभी मैंने नोट किया था कि गाँव वालों पर दारोगा जी का खूब रौब था।

चकित से उपस्थित व्यक्ति भी दारोगा जी का झड़ता हुआ रौब देख रहे थे। अभी तक उनकी दृष्टि में मिस्टर राजेश की नहीं दारोगा जी की उपस्थिति महत्वपूर्ण थी।

- 'जाकर अपनी जगह पर बैठिये और भगवान का नाम जपिये। गाँव में जितना हंगामा मचा है... उसकी वजह हैं आप। इस काम से निपट कर सबसे पहला काम यही करूंगा कि आप को दारोगा से हवलदार बनाने का आर्डर निकलवाऊं। हटिये यहाँ से।'

बिना किसी से कुछ कहे सुने ही राजेश वहाँ से चल पड़े... बिल्कुल अकेले ।

उपस्थित व्यक्तियों के चेहरे पर भय की परछाई छा गई थी। कुछ देर पहले जयन्त बड़ी अजीब अजीब सी बातें कर रहा था... परन्तु अब वह न डरा हुआ था, न परेशान। बड़े इत्मीनान से वह सिगरेट सुलगाता हुआ राजेश के पीछे पीछे चल दिया।

और फिर सहमे से उन दोनों के पीछे हम सब चले। मैं, मेघराज, उमा और ढेरों गाँव के व्यक्ति।

राजेश और जयन्त ठीक मेघराज के घर के सम्मुख वहाँ रुके, जहाँ उनकी कार खड़ी थी।

कार में से उन्होंने दो थरमस निकाल कर कंधे पर डाले। जयन्त ने एक थैला कंधे पर लटकाया। उन्होंने पीछे मुड़ कर देखा भी नहीं और बस यही सामान लेकर वे महल की सीढ़ियों की ओर चल पड़े।

भयभीत सा समूह उनके पीछे-पीछे बढ़ रहा था। गाँव की स्त्रियां भी थीं...

पुरुष भी थे।

श्यामा, उमा, मेघराज और... मैं ! मेरा दिल तेजी से धड़क रहा था।

मुझे लग रहा था जैसे वे दोनों मौत के मुँह में जा रहे हों! ऐसा लगा जैसे सीढ़ियों का आरम्भ सीमा हो !

राजेश और जयन्त के अतिरिक्त किसी तीसरे ने सीढ़ियों पर कदम नहीं रखा।

दारोगा एक ओर खड़ा हो गया। ऐसा लग रहा था जैसे जूतों से पिट कर सुबक रहा हो !

वे दोनों लगभग दस सीढ़ियां चढ़ चुके थे।

मातृत्व का एक हृदय-द्रावक उदाहरण वहाँ देखने में आया। सैकड़ों की तादाद में स्त्री पुरुष वहाँ उपस्थित थे... परन्तु जैसे सभी की जबान पर ताले लगे हुए थे।
एक वृद्धा... आयु साठ से कम नहीं थी, चीखी और दौड़ कर महल की कई सीढ़ियां चढ़ कर चिल्लाई- 'मत जाओ बेटा... लौट आओ। अरे तुम्हारी माँ बेचारी, उसके आंसू कौन पोंछेगा?'
राजेश और जयन्त दोनों ने मुड़ कर देखा। हाँफती हुई वृद्धा उन दोनों के निकट पहुँच गई थी और जकड़ कर उसने जयन्त का हाथ पकड़ लिया था।

राजेश ने उनकी बांह पकड़ी और शान्त भाव से सीढ़ियां उतरते हुए नीचे

आ गए। वृद्धा अब भी जयन्त की कलाई थामे हुई थी।

नीचे आकर राजेश बोले-'माँ जी धीरज रक्खो। हमें कुछ नहीं होगा। देखो तो, जरा सी बात के लिए कितने स्त्री पुरुष परेशान हैं? अच्छी माँ वह होती है जो अपने बेटों को साहस दे ! बेटों को बुजदिल बनाने वाली माँ अच्छी नहीं होती। ए... इधर आओ।' उन्होंने दारोगा को पास आने का संकेत किया।

शायद सुन कर आप विश्वास नहीं करेंगे, भारी भरकम दारोगा थर-थर कांप रहा था। अपनी जवांमदर्दी जताने के लिए मैं यह बात कह रहा हूँ, यह सही

मुराद महल 39

है... मैं स्वयं भी कम भयभीत नहीं था। परन्तु इस समय राजेश और जयन्त का साहस देख कर मुझमें भय कम हो रहा था, कुछ शर्मिंदगी अधिक हो रही थी।

बूढ़ी स्त्री को दारोगा के सुपुर्द करते हुए राजेश कह रहे थे- 'तमाशा देखने की तनख्वाह तुम्हें नहीं मिलती है। इन माँ को आराम से इसके घर पहुँचा कर आओ, दारोगाई जताने की जरूरत नहीं है। अगर हमारी यह माँ यहीं बैठना चाहें तो उधर ले जाकर आराम से बैठा दो।'

इतनी नम्रता प्रदर्शित करने के बावजूद जयन्त को अपना हाथ छुड़ाने में परिश्रम करना पड़ा।

मेरी आँखों के सम्मुख मुझे ऐसा लगा... जैसे पुरातत्व विभाग के डायरेक्टर खड़े कह रहे हों-'शर्म आनी चाहिए तुम्हें। अगर ये दोनों सफल हुए तो तुम्हारे लिए डूब मरते की बात होगी। अगर वह असफल हुए तो किसी अज्ञात गलत-फहमी के कारण पुराने युग की इस यादगार को गिरा दिया जायेगा और देश की इस क्षति के जिम्मेदार होगे तुम... तुम... तुम... हाँ तुम।'

मेरे अंतर की इस पुकार ने मुझे जैसे झकझोर दिया।

- 'सुनिये मिस्टर राजेश!' अनजाने ही मैंने महल की पहली सीढ़ी पर पाँव रक्खा।

राजेश ने मुड़ कर मेरी ओर देखा।

- 'आशा है कि आप मुझे साथ ले चलने में आपत्ति नहीं करेंगे। अन्दर जाना मेरा भी कर्त्तव्य है।'

मैं बढ़ा... परन्तु तभी किसी ने पीछे से मेरी बांह पकड़ी। मुड़ कर देखा तो उमा थी।

दूसरे क्षण ही लज्जा से उसकी दृष्टि झुक गई और उसने मेरी बांह छोड़ दी।

उमा के मन को मैंने पहली बार जाना।

परन्तु मैं रुका नहीं। राजेश ने मेरी बात का हाँ अथवा ना में उत्तर नहीं दिया। वह दोनों चल पड़े थे और कई सीढ़ियां चढ़ चुके थे। मैं तेजी से बढ़ा

और उन दोनों के निकट पहुँच गया और उन्हीं के साथ सीढ़ियां चढ़ने लगा।

राजेश जयन्त से कह रहे थे-'जयन्त, मैं समझता था कि इस संसार में सबसे बड़े बेवकूफ तुम हो। परन्तु इस गाँव में आकर जाना कि यहाँ भी बेवकूफों 'का बहुमत है।'

अजीब सी बात थी। उन दोनों में बिल्कुल ऐसी भावना नहीं थी कि वह मौत के मुँह में जा रहे हैं!

मुझे ऐसा लग रहा था जैसे मेरा दम घुटा जा रहा हो !

ज्यों-ज्यों महल का दरवाजा निकट आता जा रहा था, मेरे प्राण कांप रहे थे। मैं पछता रहा था कि क्यों मैंने व्यर्थ जोश में आकर कदम उठाया था।

अब मेरी परिस्थिति यह थी कि मैं सीढ़ियां चढ़ रहा था और भय के कारण दृष्टि सीढ़ियों पर ही जमाये था। दृष्टि उठा कर दरवाजे की ओर देखने का साहस नहीं कर पा रहा था।

एक तेज हवा का झोंका आया। मुझे लगा जैसे प्रेत ने सांस ली हो !

-'वाह।' मुझे जयन्त का स्वर सुनाई पड़ा-'कितनी बढ़िया चीज है!'

अनायास ही मेरी दृष्टि उठ गई।

तेज हवा इसलिये थी कि हम सीढ़ियां पार करके अब दरवाजे के सम्मुख पहुँच गये थे।

सामने ही संगमरमर की गुम्बददार बारादरी थी, जिसे देख कर जयन्त गदगद् हो गया था।

राजेश ने रुक कर सिगरेट सुलगाई। फिर पतलून की जेब में हाथ डाल कर निकाला तो हाथ में सफेद चमचमाती हुई, परन्तु छोटी सी खिलौना जैसी पिस्तौल थी।

- 'मिस्टर प्रमेन्द्र !' उन्होंने मेरे कंधे पर हाथ रक्खा।

कठिन नहीं था मेरी स्थिति को जानना... मेरा सम्पूर्ण बदन जो कांप रहा था।

वह बोले-'अगर चाहो तो लौट जाओ। यह पिस्तौल देख रहे हो न... मेरा दावा है कि यहाँ इससे बड़ा कोई प्रेत नहीं है। अगर आगे चलना है तो हिम्मत बांधो।'

और इतना कहते-कहते हम तीनों दरवाजा पार कर गये।

साहस बंधा ! तीनों बारादरी तक तो पहुँचे।

बारादरी महल के ठीक बीच में बनी थी। एक ओर मस्जिद थी और दूसरी ओर मुगलिया ढंग का दीवाने-खास बना हुआ था। दीवाने-खास के अन्दर हम

तीनों गए। मस्जिद के अन्दर अकेला जयन्त गया। इसलिए कि मैं और राजेश बूट पहने हुए थे। राजेश ने सुनसान मस्जिद की पवित्रता को भंग नहीं किया।

फिर आगे बेगमों का हरम था। उसके बाद थी किसी जमाने की फुलवारी, जहाँ अब झाड़ियां उगी हुई थीं। तालाब था... जिसमें बरसात का थोड़ा सा पानी भी भरा था।

- 'लीजिए पूरा महल देख लिया गया। छोटी सही... किन्तु शानदार इमारत है। लानत है पुरातत्व विभाग के इंजीनियरों पर जिन्होंने सत्यानाश कर रक्खा है इस इमारत का। देख रहे हो न मिस्टर प्रमेन्द्र... दरवाजे की एक बुर्जी कितनी खस्ता हालत में है? अगर मेहराबों की मरम्मत न हुई तो बारादरी को छोड़ कर कुछ ही सालों में इमारत खंडहर हो जाएगी। बेगमों के हरम के दो खंभे किसी भी क्षण गिर सकते हैं।'

सचमुच राजेश के उलाहने से मैं शर्मिन्दा हुआ-'आप विश्वास करें मिस्टर राजेश, मैं तुरन्त ही विभाग को जाकर रिपोर्ट दूंगा और सब कुछ ठीक होने में अधिक देर नहीं लगेगी।'

- 'मुझे तुमसे यही आशा है। हालांकि चाहो तो अपने प्रेत दोस्त को आवाज देकर बुला लो, शायद कहीं कोने में छुपा बैठा हो...!'

फिर हम लोग लौट पड़े। बारादरी पर पहुँच कर जयन्त ने रुकने का आग्रह किया। वहीं बैठ कर हम तीनों ने थरमस की चाय पी, बिस्कुटों का नाश्ता

किया।

भय दूर हो चुका था, परन्तु मन का भय अभी मन ही में था। चाहता था जितनी जल्दी हो सके इस मनहूस महल से बाहर निकल जाऊं। परन्तु जयन्त था कि बारादरी पर ऐसा मुग्ध हुआ कि चाय पान के बाद एक सिगरेट समाप्त करके उसी से दूसरी जलाते हुए बोला-'अच्छा राजेश, फर्ज करो कि मैं बादशाह हूँ और तुम वजीर... अगर मैं कहूँ वजीर, नाचने वालियों को हाजिर करो तो तुम क्या जवाब दोगे ?'

उठते हुये राजेश बोले-'मैं कहूँगा आलीजहाँ, आपकी सल्तनत में सिर्फ एक भूत रहता है। अगर आप उसे कहें तो बुला दूं...?'

-'भूत साले को भेजो जहन्नुम में। इन इंजीनियर साहब से यह पूछो कि वकील की बहन उमा से इनकी दाल किस हद तक गल चुकी है? लड़की अच्छी है... जोड़ा बढ़िया रहेगा।'-

मेरे मन में गुदगुदी सी हुई। प्रकट रूप में मैंने जयन्त की बात का विरोध किया। मैंने उसे बताया कि मेरी और उमा की भेंट आज प्रथम बार ही हुई है।

परन्तु इस बात की चर्चा चल जाने से मैं कल्पना की नई दुनिया में जा पहुँचा और तनिक भी मालूम नहीं हुआ कि कब एक घण्टा बारादरी में बैठे-बैठे बीत गया।

जब हम लौटे तो मेरा मन बहुत उल्लासित था। महल के नीचे पहले से भी अधिक भीड़ थी। आशा के विपरीत सब लोगों ने हमें सही सलामत उतरते देखा तो विस्मयपूर्ण उमंग से लोग भर गये।

वही वृद्धा जिसने जयन्त की कलाई पकड़ कर जाने से रोका था, जयन्त की बलायें लेने का उपक्रम करती हुई बोली-'जाको राखो साइयां मार सके न कोय।'

मेघराज आवेश में एक दो सीढ़ी चढ़ कर राजेश की ओर हाथ बढ़ाते हुए बोला-'मुझे क्षमा करें और अपने इस साहसपूर्ण कार्य के लिए मेरी बधाई स्वीकार करें।'

उमा ने मुझसे अवसर पाकर केवल एक शब्द कहा- 'निष्ठुर...!'

उस शाम मैं समझ रहा था कि भय और रोमाँच का यह दिन अब सुखद सांझ में परिवर्तित हो गया है। परन्तु यह मेरा भ्रम था... दिन ढलते ही गाँव में कोहराम मच गया।

हुआ यह कि महल से उतर कर हम तीनों स्कूल के भवन में ही चले आए। यूं श्यामा, मेघराज और उमा ने राजेश से घर चलने का इसरार किया था। परन्तु नम्रतापूर्वक राजेश ने उनका आग्रह टाल दिया और वह स्कूल भवन में ही आकर रुके।

वह कार में खाने-पीने का काफी सामान लाद कर लाए थे। स्पष्ट था कि दोनों यही सोच कर नई दिल्ली से चले थे कि कोट मुराद में कुछ दिन रहना पड़ सकता है।

पीछे-पीछे ही गाँव के कुछ अन्य लोग भी वहाँ आ गए थे। इधर-उधर की बात-चीत में ही सांझ हो गई।

मुराद महल 43

स्पष्ट था कि राजेश वकील मेघराज से कुछ खिंचे हुए थे। यहाँ तक कि उन्होंने उसके घर जाकर कॉफी पीना भी स्वीकार नहीं किया। जयन्त ने स्टोव जलाया, कॉफी बन रही थी कि गाँव में जैसे भगदड़ सी मच गई। मेघराज तो हमारे पास बैठा ही था। घबराई सी श्यामा और उमा आईं।ए ऑप्ट

- 'वह फिर आज दरवाजे पर बैठा है।' हाँफती सी उमा बोली।

मेघराज के जैसे होश उड़ गए।

राजेश ने पूछा- 'कौन...?'

- 'प्रेत ।'

राजेश प्रथम व्यक्ति थे जो यह सुन कर बिजली की सी तेजी से उठ कर उधर ही लपके जिधर भयभीत किन्तु उत्सुक ग्राम-वासी जा रहे थे।

और देखते ही देखते वह कमरा खाली हो गया। सभी आगे-पीछे उठ कर

उधर चल दिए थे। राजेश के बाद कमरे से जाने वाला दूसरा व्यक्ति मेघराज था, फिर जयन्त। और अलसाया सा था, फिर भी दारोगा जोरावर सिंह भी उठ कर गया।

सुनो !' मैं भी चला। राह में साथ चलती उमा ने मेरा हाथ थाम कर कहा- 'जरा

मेरा हाथ थामे ही वह मुझे एक छोटे गलियारे में आने जाने वालों से अलग एक ओर ले गई। शायद दौड़ने के कारण ही वह पसीने में नहाई हुई थी, हाँफती सी बोली-'तुम्हारा विवाह हो गया?'

इस प्रश्न को सुन कर मेरे अचरज की सीमा नहीं रही। मैंने कहा- 'नहीं।'

- 'घर में कौन-कौन हैं?'

- 'बस मेरे पिताजी हैं।'

- 'मुझसे विवाह करोगे?'

अचरज पर अचरज ! यूरी गागारिन की अन्तरिक्ष यात्रा का समाचार मुझे इतना अचरज में नहीं डाल सका था, जितना कि उमा के इस प्रश्न ने डाल दिया।

मैं तुरन्त उत्तर नहीं दे पाया। बस विस्मय से उसे निहारता ही रहा।

- 'मेरा सुझाव पसन्द नहीं है?

-'उमा जी, मेरा आपका पूरे बारह घंटे का भी परिचय नहीं है। यूं आप

जैसी पत्नी को पाकर मुझे बेहद प्रसन्नता होगी। परन्तु मैं यह नहीं समझ पा रहा हूँ कि ऐसा महत्वपूर्ण प्रस्ताव और इस समय...?'

- 'तुम्हारे पिताजी जाति से बाहर विवाह करने पर आपत्ति तो नहीं करेंगे?'

- 'वह सब मैं संभाल लूंगा। परन्तु इस समय...?'

-'इस समय फिर तबाही का दौर शुरू हो गया है। जैसे जिद्दी पिताजी थे, वैसे ही भैया हैं। मुश्किल से साठ बीघे पैतृक भूमि यहाँ है। इसके अतिरिक्त और क्या है इस गाँव में? परन्तु न पिता जी गाँव से हिल के दिए और न भैया गाँव छोड़ कर जाना चाहते हैं। कहोगे तो कि मैं निर्लज्ज लड़की हूँ... परन्तु मैं मरना नहीं चाहती, इसलिए मैं इस घर को छोड़ देना चाहती हूँ। मुझे हाँ और ना में उत्तर दो।'

- 'उत्तर में ना नहीं कह रहा हूँ। परन्तु घर त्यागने मात्र की भावना से आप मुझसे विवाह करना चाहती हैं न?'

-'हाँ... सोच लो। रात को दो बजे एक पैसेंजर ट्रेन जाती है।'

इतना कह कर उमा मुझे वहीं छोड़ कर चल दी।

यह तो सही है कि उमा के विवाह के प्रस्ताव से मैं रोमांचित हुआ, परन्तु जिस कारण उसने प्रस्ताव रखा था... वह कारण मुझे पसन्द नहीं था।

कुछ देर राजेश के साथ रहने के कारण एक नई बात मेरे मन में उदय हुई थी। और वह यह कि किसी भी परिस्थिति में इन्सान को साहस नहीं छोड़ना चाहिए।

उसके पीछे ही मैं भी दौड़ा और उससे पहले ही मुराद महल की सीढ़ियों के निकट जा पहुँचा।

मैंने भी देखा कि महल के दरवाजे पर गाय अथवा पालतू भैंस बकरियों की भांति भेड़िया बैठा हुआ था।

लोगों के चेहरे फक्क थे। कुछ लोग आँखें मूंदें विचित्र मुद्रा में प्रार्थना कर रहे थे। मेघराज राजेश से उलझा हुआ था। कस कर उसने दोनों हाथों से राजेश को पकड़ रक्खा था।

- 'मैं आपको हर्गिज ऊपर नहीं जाने दूंगा। आप नहीं जानते कि आप क्या कर रहे हैं? आप अपनी मौत को तो दावत दे ही रहे हैं... साथ ही गाँव की तबाही को भी न्योत रहे हैं।'

मुराद महल 45

राजेश शांत थे।

जयन्त निकट ही खड़ा था। वह दूरबीन लगाए ऊपर दरवाजे की ओर देख रहा था।

-'ऊं हूँ! यहाँ से निशाना ठीक नहीं बैठा। वकील साहब की बात मान लो

राजेश ! मैं पंद्रह-बीस सीढ़ियां चढ़ कर इस भेड़िए को गोली मारे देता हूँ। मेरा ख्याल है कि भेड़िया बीमार है, हिल-डुल नहीं रहा है। पलकें भी बीमार की तरह ही बोझिल हैं।'

यूं देखने में मेघराज खूब भरे हुए बदन का था, परन्तु बांह छुड़ाने के लिए राजेश ने उसे जो झटका दिया तो बांह हाथों से मुक्त थी। राजेश एकदम तीन-चार सीढ़ियां ऊपर चढ़ गए।

ऊंचे स्वर में उन्होंने कहा- 'वकील साहब आप जानते हैं कि पुलिस के कार्यों में नागरिकों को इस प्रकार बाधा नहीं देनी चाहिए। अगर आपको मुझसे शिकायत है तो शौक से पुलिस सुपरिटेंडेंट अथवा जिला मैजिस्ट्रेट को फोन कर दीजिए।'

इस समय मैं राजेश के साहस को देख कर गदगद् हो गया। पहली बार मैंने जाना कि साहसपूर्ण मृत्यु भी कायरता के जीवन से बेहतर है।

मैं लपका और राजेश के निकट जा पहुँचा।

शायद ऐसा उन्होंने सोचा भी न था कि मैं इतना साहस कर सकता हूँ।

वह चौंके-'तुम...?'

- 'जी हाँ।'

- 'बेहतर हो कि तुम सीढ़ियों से नीचे ही रहो।'
मैंने नम्र प्रतिवाद किया-'मैं आपके काम में बाधक नहीं बनूंगा। फिर भी मेरा कर्तव्य है कि मैं आपके साथ चलूं।'

मेरे प्रतिवाद का उन्होंने हाँ अथवा ना में उत्तर नहीं दिया। हाथ में पिस्तौल लेकर वह आगे बढ़े। उनके साथ तो नहीं... अलबत्ता उनसे दो-तीन सीढ़ी ही पीछे मैं था।

अभी उन्होंने लगभग आधी ही सीढ़ियां तय की थीं कि पीछे से पुकारता हुआ जयन्त आया-'संभल कर राजेश, वह पीछे हट गया है।'

मैंने ऊपर देखा... अब भेड़िया दिखाई नहीं पड़ रहा था। दरवाजे पर

पहुँचने वालों में पहले राजेश थे। मैं और जयन्त कुछ सैकिण्ड बाद पहुँचे।

भेड़िया अब वहाँ नहीं था।

राजेश दरवाजे पर रुके नहीं, हाथ में पिस्तौल ताने वह आगे बढ़ते ही गए।

बारादरी, मस्जिद, दीवाने-खास, बेगमों का हरम, तालाब... सभी कुछ छान मारा गया। परन्तु व्यर्थ... भेड़िए का कहीं नामो-निशान भी नहीं था।

सूरज ढल चुका था। शाम की परछाईं अंधकार बन कर फैल गई थी। हम तीनों फिर दरवाजे पर लौट आए।

सिगरेट केस निकाल कर जयन्त ने मुझे और राजेश को सिगरेट दी और फिर सिगरेट सुलगा कर धुआं उड़ाते हुए कहा- 'मैं कुछ कहूँ राजेश? देखो... मैं डर नहीं रहा हूँ। जो कह रहा हूँ बेधड़क और बेबाक होकर कह रहा हूँ, यह बात मेरी सुनते समय याद रखना। मैंने दूरबीन से देखा है कि

वह अच्छा-खासा मोटे कल्ले वाला भेड़िया था। सवाल यह है कि वह गया कहाँ? सुंई या तिनका तो वह था नहीं जो नजर से चूक गया हो !'

- 'बिना भूमिका के कहो कि तुम्हें क्या कहना है?'

- 'मुझे यह कहना है कि क्यों न हम अपने काम का ढंग बदल दें? हमें यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि वास्तव में यह भेड़िया नहीं प्रेत है, जो इच्छानुसार रूप बदल सकता है। वह हवा बन कर उड़ सकता है, भेड़िया बन कर लोगों को डरा सकता है... और आदमी बन कर ड्रेकुला की तरह रोमाँस भी कर सकता है। यह हुई नई परिस्थिति। अब इस परिस्थिति के अनुसार हमें अपना कार्यक्रम बनाना चाहिए।'

राजेश कभी उस स्थान को देखते थे जहाँ कुछ देर पहले भेड़िया बैठा था, और कभी उन पत्थरों पर बूट मार रहे थे। बोले-'ठीक है... कार्यक्रम बना डालो।' परा

-'मेरी राय है कि हम इस दरवाजे में एक हनुमान जी की मूर्ति बनवा कर रख दें। बकौल बुजुर्गों के प्रेत हनुमान जी से तो घबराते हैं... परन्तु मूर्ति से नहीं घबराते। मेरी राय है कि हम प्रेत से लड़ने का विचार ही त्याग दें।'

- 'गुड... वेरी गुड ! कभी-कभी यार तुम सचमुच बहुत ही बढ़िया बात कहते हो। अब प्रेत से दोस्ती की जाए।

अब जयन्त चौंका-'क्या मतलब?

- 'मतलब यह कि हम दोनों आज की रात मुराद महल में ही अपने-अपने बिस्तर लगाएं और प्रेत से मुलाकात करें। उससे कहें कि बड़े भाई, हम दोनों में कोई पुश्तैनी दुश्मनी तो है नहीं ... इसलिए क्यों न तुम हमारे दोस्त बन जाओ ?'

- 'यह बकवास है!' जयन्त भिन्ना कर बोला।

- 'बकवास के जवाब में गीता के श्लोक तो नहीं सुनाए जा सकते? लेकिन फिर भी मैंने बात ठीक कही है जयन्त... हम दोनों को रात भर यहीं रहना है।'

-'क्या तुम समझते हो कि मैं डर जाऊंगा? माई डीयर, मैं एक रात तो क्या एक सौ एक रात यहाँ रह सकता हूँ। बजरंग बली का सुमरन करूंगा और गायत्री मंत्र का जाप करूंगा।'

राजेश जाने क्या सोचते हुए फिर लगभग बीस कदम दरवाजा पार करके दूसरी ओर गए। कुछ क्षण वहाँ रुके और फिर वापस लौट कर बोले-'जयन्त, रात को यहाँ रुकना ही होगा। मुझे आशा है कि आज यहाँ के रहस्य का पता हम लोग पा लेंगे। यों अधिक प्रकाश होता तो और अच्छा था, परन्तु आज की रात यह सब संभव नहीं है। अलाव जलाया जा सकता है और टार्च हम लोगों के पास रहेंगी ही।'

- 'नहीं भाई... ऐसा वीर मैं नहीं हूँ।'

- 'मैं तुम्हें वीर बना कर ही छोडूंगा। जयन्त, मुझे लगता है कि तुम्हें कोई बीमारी है जिसके कारण तुम इतनी जल्दी हतोत्साहित हो जाते हो।

इलाज...!'

- 'इलाज मुझे आपसे नहीं कराना है।' कार

उन दोनों में इस प्रकार की बातें हो रही थीं कि नीचे अचानक ही कोहराम मच गया। यों अब स्पष्ट प्रकाश नहीं रहा था, फिर भी नीचे भगदड़ मच गई थी... ऐसा तो दिखाई पड़ ही रहा था।

- 'क्या हुआ?' राजेश चौंके।

परन्तु हम तीनों में से कोई भी तो नहीं जानता था कि क्या हुआ?

अबकी बार मैं पहले दौड़ा, परन्तु नीचे पहुँचते पहुँचते राजेश और जयन्त मुझसे आगे आ गए थे।

नीचे पहुँचे तो एकदम सन्नाटा था।

सर्वप्रथम राजेश दौड़ कर मेघराज के मकान पर पहुँचे... दरवाजा खटखटाया।

घबराया सा मेघराज का स्वर हम तीनों ने सुना-'मैं दरवाजा नहीं खोलूंगा मिस्टर राजेश ... प्लीज आप लौट जाइए, आप अपने साथ हमें भी तबाह करेंगे।'

-'आप सब कुशल तो हैं?'

- 'जी हाँ। अभी तो कुशल हैं, परन्तु यदि आपकी कृपा रही तो...?'

- 'यह तो कहिए कि मामला क्या है...?'

- 'किसी और से पूछिये। आखिर आप मुझे ही संकट में क्यों डालना चाहते हैं?'

धीमे किन्तु स्पष्ट स्वर में राजेश ने कहा- 'इडियट !'

गाँव से गलियारे की ओर हम तीनों आगे बढ़े। ऐसा लगता था जैसे गाँव में कोई रहता ही न हो। निर्जन श्मशान जैसा वातावरण था।

स्कूल के निकट ही राजेश ने एक व्यक्ति को लगभग बेहोश औंधा पड़ा हुआ पाया। हम तीनों मिल कर उसे स्कूल के लॉन में लाये। उसका सारा बदन धूल धूसरित था और कमर पर कई जगह से वह लहू लुहान था।

मैंने कुएं से पानी खींच कर उसके मुँह पर पानी के छींटे मारे... जयन्त ने हवा की। तब कहीं जाकर वह कुछ होश में आया।

-'क्या बात हुई भाई ?' राजेश ने पूछा।

परन्तु कोई उत्तर देने के बजाय वह रो पड़ा। उसे ढांढस बांधने में काफी समय लगा। तब कहीं उसने सिसकते हुए बतलाया-'प्रेत... प्रेत भेड़िया बन कर आया था। मेरा घर दूर था। दौड़ा तो पाँव में मोच आ गई। दौड़ नहीं पाया। भेड़िए प्रेत ने कमर में पंजा मारा है। दर्द से मरा जा रहा हूँ। मुझे बचा लो बाबू जी... मैं... मैं।'

-'घबराओ नहीं। यह बताओ कि तुम्हारा नाम क्या है और घर कहाँ है?'

है मेरा।' - 'मैं तो बाबूजी आपका नाई हूँ... भैरव। उधर पोखर के पास झोंपड़ा

इस घटना के बाद राजेश कुछ असन्तुष्ट से दिखाई पड़ने लगे।

मुराद महल 49

मैं और जयन्त भैरव को उठा कर परिचर्या के लिए अन्दर स्कूल के हॉल में ले गए। उल्टे पाँव ही जयन्त राजेश के आदेश से कार लेने चला गया। मैंने स्विच ढूँढ कर लाइट ऑन की तो देखा वहीं स्कूल के हॉल के एक कोने में जोरावर सिंह दुबके बैठे थे।

आग्नेय नेत्रों से राजेश ने दरोगा को देखा-'तो तुम यहाँ हो ?'

- 'जी... मैं... हाँ। मैं क्या करता ? भला प्रेत के आगे मेरा वश तो नहीं चल सकता। ईश्वर रक्षा करें... ऐसा भयंकर प्रेत मैंने आज तक नहीं देखा। पल-पल में रूप बदलता है। अभी यहाँ तो अभी वहाँ... हजारों आदमियों के बीच भी नहीं डरता।'

- 'तुमसे भी नहीं डरा ?'

राजेश के इस प्रश्न के उत्तर में दारोगा जी ने दृष्टि झुका ली

- 'आप यहाँ किसलिए आए थे?'

-'जी... आप ही ने तो बुलवाया था।'

-'ओह! हाँ, बुलवाया तो मैंने ही था। वैसे आपकी क्या राय है... मैंने आपको यहाँ कोने में खड़ा रहने के लिए बुलवाया था?'

-'जान तो सभी को प्यारी होती है साहब... मैं कुछ नहीं कर सकता। सौ आदमियों से अकेला जूझ सकता हूँ, परन्तु प्रेत से उलझना मेरे बूते की बात नहीं है। आप अफसर हैं... नौकरी रक्खें, मुझे अपनी जान प्यारी है।'

-'आपको जहालत प्यारी है दारोगा जी। हिन्दुस्तान में आप जैसे नमूनों के कारण ही जहालत की बरकत है। खड़े रहिए यहीं कोने में।'

जयन्त कार लेकर आ गया। कार में फर्स्ट एड का सामान था। मैंने और जयन्त ने मिल कर भैरव की पट्टी कर दी।

कार आते ही राजेश उसमें जा बैठे और मुँह और कानों से बेतार संदेश-प्रेषक यंत्र लगाए। वह लगभग बीस मिनट तक जाने कहाँ से संबंध बनाए निरन्तर संदेश भेजते रहे। जान-बूझ कर ही शायद उन्होंने कार की खिड़कियों के शीशे चढ़ा लिए थे। उसके बाद जाने कहाँ सम्बन्ध स्थापित किया और संदेश भेजा।

जब वह कार का दरवाजा खोल कर उतरे तो उन्होंने कार में लगा रेडियो खोल दिया और खूब तेज आवाज में खोला। संगीत की स्वर लहरी नीरव

वातावरण में गूंज उठी।

- 'प्रमेन्द्र, जयन्त... बाहर आ जाओ भाई।' राजेश ने आवाज दी।

हम दोनों बाहर आ गए।

रेडियो खोल देना भर बहुत हुआ। निश्चय ही भय से घर में मुंदे लोगों को इस संगीत स्वर लहरी से सांत्वना मिली। स्कूल के सामने की एक खिड़की खुली, एक व्यक्ति ने खिड़की में से झांक कर भी देखा।

हम तीनों ही कार के निकट आ गए। ऐसा लगता था कि जयन्त और राजेश दोनों ही हर परिस्थिति में चौकन्ने रहने के अभ्यस्त थे। परन्तु मैं कुछ आलस्य सा अनुभव कर रहा था, यूं ही मैं उचक कर कार के इंजन बोनट पर बैठ गया।

कुछ क्षण ही मुझे वहाँ बैठे बीते थे कि ऐसा लगा जैसे कोई चीज ऊपर गिरी हो। जयन्त उछला... राजेश उस पर झपटे... मैं चौंक कर नीचे उतरा।

एकबारगी फिर मेरा हृदय कांप उठा। राजेश के हाथ में काले सांप का लपलपाता हुआ फन था। जैसे कोई निशानेबाज शब्द भेदी बाण मारे... इस प्रकार बिजली की तेजी से राजेश ने जेब से पिस्तौल निकाल कर एक साथ तीन फायर किए। साइलेंसरयुक्त पिस्तौल से फायर तो हुए, परन्तु आवाज बहुत साधारण हुई। ऐसी साधारण कि कोई कल्पना भी न कर सके कि पिस्तौल चली है।

- 'जयन्त, कार में से दोनों टार्च निकालो। यकीनन कोई था... जिसने सांप को इधर फेंका है। अलबत्ता गोली चलाने में कुछ सैकेंड का विलम्ब हुआ है... जल्दी करो।'

मुझे भी अपने कर्तव्य का आभास हुआ। मैं तेजी से राजेश की ओर बढ़ा। सांप ने इतनी मजबूती से राजेश की कलाई जकड़ ली थी कि पूंछ की तरफ से मैंने उसे खींचा तो ऐसा लगा जैसे कोई बंधी हुई गांठ हो !

- 'क्यों बेकार परेशान होते हो प्रमेन्द्र ! इस सांप रूपी प्रेत से भी अधिक शक्तिशाली प्रेत मेरे पास है। हटो तो जरा एक तरफ।

दूसरे हाथ से मुझे एक ओर करके उन्होंने लगभग एक फीट का फासला लेकर फायर किया। कमाल का निशाना था और गजब का आत्मविश्वास था। सांप का फन उंगलियों से केवल एक इंच ऊपर निकला हुआ था... जिसे फाड़ कर दो भागों में विभक्त करती हुई गोली निकल गई थी। जरा सा भी निशाना चूकने पर हाथ जख्मी हो सकता था।

फिर उन्होंने अपने हाथ से ही सांप के लपेट निकाल कर उसे नीचे फेंका

और जयन्त के हाथ से टार्च लेकर वह लपके- 'तुम यहीं ठहरो जयन्त... चौकन्ने और होशियार रहना।'

मैंने पूछा-'मैं आ सकता हूँ मिस्टर राजेश ?'

शायद राजेश ने मेरी बात नहीं सुनी। परन्तु इसकी सम्भावना अधिक थी कि मेरी बात सुन कर भी वे अनसुनी कर गए। जयन्त मरणासन्न सांप को कुचलता हुआ बोला-'छोड़ो यार, यह चक्कर तो हम लोगों के भाग्य में ही लिखा है। तुम क्यों झंझट में पड़ते हो?'

परन्तु साहस और रोमाँच की इस रात में मैं पीछे नहीं रहना चाहता था। यों तब भी मैं अपने मन की निर्बलता से परिचित था, परन्तु उन दोनों का साहस मेरे सम्मुख प्रतीक रूप में उपस्थित था।

मैं उमा के घर की ओर बढ़ा, परन्तु कुछ ही कदम चलने पर राजेश दिखाई पड़ गए। गलियारे में ही एक जगह बैठे वह टार्च जला कर ईंटों के फर्श को देख रहे थे... ऐसे जैसे कुछ खो गया हो !

निकट जाकर मैंने पूछा- 'मैं कुछ कर सकता हूँ मिस्टर राजेश?'

एक हाथ में पिस्तौल और दूसरे में टार्च थामे वह उठे-'यकीनन कोई इन्सान था, प्रेत नहीं था। जान-बूझ कर मैंने गोली नीची चलाई थी। फलस्वरूप वह मर तो नहीं सका, अलबत्ता उसका पाँव जख्मी हुआ है, और...।'

वह आगे बढ़े, परन्तु बहुत ही धीरे-धीरे। आगे दो राह फटती थीं... एक उमा के घर की ओर जाती थी, और दूसरी गाँव के खेतों की ओर... कच्ची और छोटी राह।

यहाँ फिर नीचे बैठ कर राजेश ने टार्च के प्रकाश में जमीन का निरीक्षण किया और उमा के घर की राह छोड़ कर छोटे गलियारे की ओर बढ़े।

मात्र पचास कदम वह लगभग पन्द्रह मिनट में बढ़े। फिर उठते समय जैसे ही टार्च का प्रकाश गलियारे पर पड़ा, चौंक कर वह मेरी बांह पकड़ कर एक गाड़ी की ओट में खड़े हो गए।

प्रकाश में जो देखा, उसे देख कर एकबारगी मेरे देवता फिर कूच कर गए। सामने ही दीवार थी। वास्तव में वह ठीक गलियारे के बीच बने कुएं की जगह थी और कुएं की मुंडेर के नीचे भेड़िया स्पष्ट दिखाई पड़ रहा था।

लगभग दो मिनट राजेश स्थिर खड़े रहे। फिर वह झुके और एक ढेला उठा कर भेड़िए को लक्ष्य करके फेंका।

भेड़िया तनिक हिला... परन्तु हिंसक पशु की भांति उसने आक्रमण नहीं किया।

मेरे मन में विश्वास जम गया कि भेड़िए के रूप में यह निश्चय ही मानव प्रेत है। कालि

किसी परन्तु राजेश जिस मिट्टी से बने थे, उस मिट्टी में तो भय की कोई जगह ही नहीं थी। दबे पाँव वह आगे बढ़े।

मैंने भय से आँखें मूंद लीं।

परन्तु आँखें भी तो मूंदे नहीं रह सका। राजेश की प्रेत के सम्मुख आने पर क्या गति होगी मन की इस उत्सुकता ने फिर आँखें खुलवा दीं।

राजेश कुछ कदम ही भेड़िए से दूर रह गए थे।

चाहा कि चीख पड़ें। मन में झुंझलाहट हुई कि यह व्यक्ति क्यों अपनी जान देने पर तुला हुआ है?

पिट!
साइलेंसर पिस्तौल फिर से चल गई।

मैंने संतोष की सांस ली। इसलिए कि एक ही गोली में भेड़िया चित्त हो गया।

'प्रमेन्द्र !' राजेश ने मुझे पुकारा- 'आ जाओ... दूसरा प्रेत भी खेत रहा।'

सहमता हुआ मैं राजेश के निकट पहुँचा।

- 'प्रेत नम्बर दो... थोड़ा सा साथ देना होगा। खींच-खांच कर इसे पड़ाव तक ले चलना है। घबराओ नहीं... गोली ठीक सिर में घुसी है।'

राजेश झुके। टार्च जेब में रख कर भेड़िए का एक पाँव पकड़ कर उन्होंने खींचा।

- 'आप छोड़ दीजिए, मैं खींच कर ले चलूंगा। आपके हाथों में पिस्तौल और टार्च दोनों जरूरी हैं।'

मन की बात कहूँ ?

फिर भी मेरी इतनी हिम्मत नहीं हुई कि भेड़िए को सिर की ओर से पकड़

लूं। मैंने पीछे की ओर से उसके पाँव पकड़े और ठेले की तरह खींचता हुआ चल पड़ा।

मुराद महल 53

चलते-चलते राजेश बोले-'प्रमेन्द्र, तुम सोच रहे होगे कि बहुत बुरी सायत में घर से चले जो इतनी आपदाएं सहनी पड़ीं?'

-'मैं भयभीत अवश्य हो जाता हूँ मिस्टर राजेश ! दिमागी तौर पर मैंने यही सोचा है कि आपके सान्निध्य का संयोग न केवल जीवन की एक सुखद स्मृति में रहेगा, बल्कि आगामी जीवन के लिए साहस का प्रतीक भी...!' बात मैं पूरी कह भी नहीं पाया था कि गलियारे के द्वार पर मुझे एक परछाई सी दिखाई पड़ी।

भयभीत सा मैं चीखा-'कौन है?'

शान्त और संयत भाव से चलते हुए राजेश ने कहा- 'यह गाँव है भाई, चलने फिरने पर कर्फ्यू आर्डर थोड़े ही लगा हुआ है? और फिर... यह तो उमा है।'

उसी क्षण टार्च के प्रकाश को चीर कर उमा ने उधर मुँह किया।

तथा न कमाल ? अंधेरे में सिर्फ चाल देख कर राजेश ने उमा को पहचान लिया था।

निकट पहुँचने जब मेरे हाथों में भेड़िये को उसने देखा तो वह उलाहने जैसे स्वर में बोली- 'थोड़ी सी फुरसत है?'

मैंने कहा-'कहो।'

- 'भैया जरा तुमसे बात करना चाहते हैं।'

राजेश ने हँसते हुए कहा- 'गनीमत है! तुम्हारे भैया ने किसी से तो बात करनी चाही ?'

राह में मैंने उमा से पूछा- 'क्या कहना चाहते हैं वकील साहब?'

- 'वही... जो मैं कह रही थी।'

- 'तो तुमने ही उन्हें वह सब करने के लिए कहा होगा ?'

- 'हाँ।' उमा ने संक्षिप्त उत्तर दिया।

-' इस समय तुम्हें यह बात अपने परिवार में नहीं उठानी चाहिये थी।'

चलती चलती वह रुक गई-'इसका मतलब मैं यही समझू न कि तुम्हें प्रस्ताव स्वीकार नहीं है?'

-'तुम मुझे गलत समझ रही हो।' सहज भाव से मैं बोला- 'तुम कोई बच्ची

नहीं हो जो तुम्हें यह समझाने की आवश्यकता हो कि शमशान में शहनाई नहीं बजाई जाती है!'

जिस स्थान पर वह खड़ी थी, वहाँ उजाला नहीं था। फलस्वरूप मैं देख नहीं सका कि मेरी यथार्थ बात की उस पर क्या प्रतिक्रिया हुई। फिर भी मेरी बात से उसे दुख पहुँचा है, ऐसा उसके निश्वास और बोझिल स्वर से स्पष्ट था।

- 'तो तुम लौट जाओ।'

-'उमा !' मैं उसके बिल्कुल निकट जाकर बोला।

वह बोली नहीं, दृष्टि झुकाये मेरे सामने से हट कर घूमी और मेरी अर्ध परिक्रमा करती हुई आगे निकल गई।

- 'सुनो तो उमा !' बिल्कुल उसके निकट पहुँच कर चलते हुए बोला- 'मेरे मन की बात तो यह है कि तुम्हें पाने के लिए मैं कोई भी अनुचित काम करने के लिए हर समय तत्पर हूँ। सच्चाई है कि तुम मेरे लिए आकाश कुसुम के समान अप्राप्य हो और तुम्हें पाने के लिए कुछ भी करने में मुझे आपत्ति नहीं होगी। मैंने तुमसे जो भी कहा है वह इसलिए नहीं कि मुझे तुम्हारे प्रस्ताव पर आपत्ति है, बल्कि व्यवहार रूप में जो होना चाहिए वह सुझाव था। मानो तो... न मानो तो। वैसे चाहे तो आजमा देखो... तुम्हें अधिकार है कि मुझे आदेश दे सको।'

मी वह मौन चलती रही।

- 'अब भी नाराज हो ?'

रूठना उमा के स्वभाव की विशेषता थी। फिर भी वह नहीं बोली।

अब उसका घर निकट आ चुका था।

मैंने उसकी बांह थाम ली-'उमा !'

रूआंसे स्वर में वह बोली-'बांह छोड़ दो।'

-'ओह!' बांह छोड़ते हुए मैंने कहा-'तो मैं लौट जाऊं?'

- 'मुझे नहीं मालूम।'

वह आगे बढ़ी। मैंने फिर उसकी बांह पकड़ ली-'किसी को सब्ज बाग दिखा कर इस तरह घृणा के जलते रेगिस्तान में ढकेल देना किससे सीखा है?'

उमा ने इस बार दृष्टि उठाई। और मानो अपने मन के भाव से स्वयं लजा गई-'तुम से।'

दार्शनिक वर्षों सिर खपा कर भी नारी के मन की थाह नहीं पाते, तो मुझ जैसे साधारण युवक भला क्या समझें?

'तुम से' दो शब्दों के अपनत्व की तुलना में संसार के अन्य सुख तुच्छ प्रतीत हुए। स्वयं अपने भाग्य से ईर्ष्या हुई।

अबकी बार उमा ने बांह छोड़ने के लिए नहीं कहा। उसकी बांह के स्पर्श से अन्तहीन सुख की कल्पना करता मैं उसके ड्राइंगरूम के दरवाजे तक जा पहुँचा।

दरवाजा अब भी बन्द था।

- 'भैया !' उमा ने दरवाजा थपथपाते हुए धीरे से कहा- 'बांह छोड़ो न।' मैंने बांह छोड़ दी। दूसरे ही क्षण श्यामा ने दरवाजा खोल दिया।

मेघराज उदास सा सोफे पर बैठा था। मुझे उसने अपने ठीक सामने बैठने का संकेत किया। श्यामा सोफे का सहारा लेकर नीचे कारपेट पर बैठ गई। उमा मेघराज के बराबर बैठी। अलबत्ता... मानो कोई अपराधिनी हो, इस प्रकार उसकी दृष्टि झुकी हुई थी।

- ' आपका नाम प्रमेन्द्र है न?' मेघराज ने मौन भंग किया।

- 'जी हाँ, मुझे प्रमेन्द्र कहते हैं।'

- 'आप उमा से विवाह करने को तत्पर हैं?'

- 'जी हाँ। उमा जी शिक्षित और सुन्दर कुमारी हैं। विवाह करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु अभी तक मैं यह नहीं समझ पाया कि इस विपत्ति के समय में आपने इस बात को क्यों उठाया है?'

- 'वही बताने के लिए तो मैंने बुलाया है।'

- 'फरमाइए।'

- 'आप तो जानते ही हैं कि मेरे पिताजी का अन्त...?'

-'जी हाँ, आपकी श्रीमती जी और उमाजी ने मुझे सब कुछ बता दिया है।'

मेघराज ने उमा और श्यामा पर दृष्टिपात करते हुए अर्थ-भरी दृष्टि मुझ पर डाल कर कहा-'दोनों ने तुम्हें ज्योतिषी वाली बात नहीं बताई, बताने की जरूरत भी नहीं थी अगर राजेश यहाँ आकर मुझे संकट में न डाल देते। पिताजी की मृत्यु के बाद इसी गाँव के व्यक्तियों ने एक बात बताई थी। तब तो मैंने भी उस बात को महत्व नहीं दिया था, परन्तु आज मैं चाह कर भी वह बात दिमाग से नहीं निकाल पा रहा हूँ।'

- 'आखिर ऐसी क्या बात है?' मैंने यूं ही पूछा।

- 'हमारे गाँव के ज्योतिषी पंडित रुद्रदत्त शास्त्री पूरे लखनऊ और बनारस तक प्रसिद्ध हैं। पिताजी के मरने के बाद उन्होंने बताया था कि ठीक जैसे विपरीत ग्रह पिताजी के थे, वैसे ही उमा के हैं। उमा के ग्रहों की शान्ति के लिए उन्होंने सुझाव दिया था कि उमा का विवाह कर दिया जाए। गाँव के बुजुर्ग के नाते उन्होंने एक लड़का भी बताया था, परन्तु तब मैंने उनकी बात पर विश्वास नहीं किया और चूंकि वह लड़का जो उन्होंने बताया था मुझे पसन्द नहीं था, इसलिए मैंने उनकी बात को टाल दिया।'

- 'आज आप व्यर्थ घबरा रहे हैं वकील साहब ! वास्तव में मन के भ्रम ने

आपको डरा दिया है। आपको ही नहीं... पूरे गाँव वालों को भ्रम ने डराया है। मैं स्वयं भी अपवाद नहीं हूँ। सच जानिए, अगर साहस जोर न मारता तो मैं भी गाँव वालों की भांति ही कहीं छुपा बैठा होता। राजेश और जयन्त से हम सभी को कम से कम हिम्मत से काम लेना तो सीखना ही चाहिए। शायद आपको जानकारी नहीं है कि वह एक सांप और भेड़िए का शिकार कर चुके हैं...।'

- 'प्लीज मिस्टर प्रमेन्द्र ! यह बात मत उठाइए। आपने सिर्फ सुना है और मैंने देखा है। वास्तविकता और भयंकरता मैं आपसे अधिक जानता हूँ। छोड़िए इस बात को, यह कहिए कि क्या आप तुरन्त विवाह की परिस्थिति में हैं?'

अजीब प्रश्न था मेघराज का।

यूं मुझे कोई आपत्ति नहीं थी। अतएव मैंने स्पष्ट ही हाँ करते हुए कहा-'मुझे कोई आपत्ति नहीं है। उमा जी मुझे पसन्द हैं, परन्तु मुख्य प्रश्न तो यह है कि मुझे आप केवल विपत्ति को टालने के लिए ऐसा कर रहे हैं?'

- 'हाँ... सच्चाई से मुझे इन्कार नहीं है।'

-'वकील साहब, यह तो आपको बताने की आवश्यकता नहीं है कि विवाह जीवन के सर्वाधिकार महत्वपूर्ण व्यापार को कहते हैं। अतएव आपके और आपकी मिसेज के लिए आवश्यक है कि इस रिश्ते में दोनों की एक हार्दिक और स्थाई राय हो। साथ ही यह जानना भी आवश्यक है कि उमा जी भी मुझे परिस्थिति ही नहीं, मन से भी पसन्द करती हैं अथवा नहीं ?'

-'यह सुझाव उमा का ही है और आप विश्वास कीजिए कि उमा बहुत ही समझदार है। रही मेरी और श्यामा की बात... तो हमें भी आप पसन्द हैं।'

- 'तब ठीक है।'

- 'तो मैं जाकर पंडित जी और सरपंच को बुला लाऊं?'

-'अभी...?' मैं चौंका।

-'हाँ... अभी।' मेघराज उठा और मेरे निकट आकर मेरे कंधे पर हाथ रख कर बोला-'कौन कह सकता है कि रात में क्या होगा?'

- 'रात में कुछ नहीं होगा। आप व्यर्थ ही डरे हुए हैं।'

-'तुम ठीक कहते हो। सचमुच मैं, श्यामा और उमा... तीनों ही बहुत डर गए हैं। परन्तु यह सब अकारण ही नहीं... पिताजी की चिथड़े-चिथड़े हुई लाश...!'

- 'ईश्वर के लिए चुप रहिए... आज की रात इस बात को मत दोहराइए।' श्यामा जैसे चीख पड़ी !

उस मृदु युवती के चेहरे पर भय स्पष्ट दिखाई पड़ने लगा। फिर वह बैठे-बैठे ही सोफे की ओर घूमी और उमा के घुटनों में अपना मुँह छिपा लिया।

बोझिल वातावरण को हल्का करने के लिए मैं उठा और बोला-'मैं जरा

मिस्टर राजेश और जयन्त बाबू को यह खुशखबरी दे दूं।'

मेरी इस बात से मेघराज चिढ़ सा गया- 'आप तो व्यर्थ की बात कर रहे हैं प्रमेन्द्र बाबू ! कृपया उन आफत की जड़ों का नाम मेरे सामने मत लीजिए। उनसे आपकी जान-पहचान आज ही तो हुई है। छोड़िए... यह ऐसा विवाह नहीं है जिसमें बिस्मिल्लाह खां की शहनाई की धूम होनी है। केवल रीति ही तो निभानी है !'

- 'बहुत अच्छा। यह लीजिए... मैं बैठे जाता हूँ। आप जा ही रहे हैं, उन दोनों से कह दीजिएगा। वैसे वह दोनों चाह कर भी नहीं आ सकेंगे... आप निश्चिन्त रहें।'

- 'मैं उन दोनों से बात नहीं करूंगा मिस्टर प्रमेन्द्र ! आपके हाथ जोड़ता हूँ यह काम सम्पन्न कर लीजिए।'

उस क्षण मैं झुंझला कर उठ जाना चाहता था। उठ ही रहा था कि अनायास ही दृष्टि उमा पर जा टिकी। आंसू से भीगे कपोलों ने मेरा बौद्धिक तर्क समाप्त कर दिया।

-'अच्छा।' मैंने कहा-'जाने दीजिए! आप जा रहे थे न... जाइए।'

मेघराज मुड़ा। झुक कर स्नेहसिक्त हो श्यामा के कंधे को छूकर कहा-'ऊपर बैठो श्यामल ! देखो घबराना नहीं... मैं दस मिनट में लौट रहा हूँ।'

दबी सी विनय श्यामा द्वारा हुई 'इन्हें साथ ले जाइए न! अकेले क्यों जाते हैं?'

- 'अभी कुछ नहीं है। अभी तो उन जासूसों का रेडियो चल रहा है। राह बिल्कुल सुनसान नहीं है... प्रमेन्द्र तुम्हारे पास रहेंगे। मैं...!'

आखिरी वाक्य कहते-कहते मेघराज जैसे ही घूमा और ड्राइंगरूम के दरवाजे पर जो कुछ देखा... उसे देख कर वह चीख भी भली प्रकार न सका।

दरवाजे से बाहर एक और जीवित भेड़िया खड़ा था। परन्तु वह इतना बाहर भी न था कि दरवाजा बन्द किया जा सकता।

श्यामा के मुँह से हल्की सी चीख निकली।

मेघराज लड़खड़ाया और धड़ाम से फर्श पर गिरा। उमा ने कस कर आँखें बन्द कर लीं।

मैं एक क्षण सकपकाया सा खड़ा अवश्य रहा, परन्तु इन तीनों की तरह घबराया नहीं। मैं भेड़िए की ओर नजर बांध कर देखता रहा। हालांकि शिकार का मुझे तनिक भी अनुभव नहीं था, परन्तु फिर भी मैंने नोट किया कि भेड़िए की आँखें बोझिल और सुस्त सी थीं।

आज की रात मेरे सम्मुख राजेश और जयन्त साहस के प्रतीक थे। मैंने कमरे में दृष्टिपात किया। खूंटी पर बन्दूक टंगी थी, परन्तु मेरी दृष्टि मेज पर रक्खे पेपरवेट पर जा पड़ी। फुर्ती से मैंने पेपरवेट उठाया और खींच कर

भेड़िए को लक्ष्य करके फेंका।

पेपरवेट भेड़िए के ठीक मुँह पर जाकर लगा। वह न गुर्राया और न झपटा। इसके विपरीत वह तनिक पीछे हटा। अवसर को उचित जान कर मैं बढ़ा और दरवाजा बन्द करना ही चाहता था कि यकायक बिजली बन्द हो गई और अंधेरा छा गया।

और फिर जो मैंने देखा... उस पर आँखें विश्वास न कर सकीं।

मैंने देखा कि ड्राइंगरूम के बरामदे से आगे मेघराज की छोटी सी फुलवारी के ऊपर एक हड्डियों का ढांचा।

ऊपर से मेरा तात्पर्य यह था कि ढांचा जमीन पर खड़ा नहीं था, बल्कि मुराद महल जमीन से कई फीट ऊपर वह इस तरह हिल रहा था जैसे हवा में तैर रहा हो !

मेरे भी गले तक चीख आई... परन्तु रुक गई।

एक बार मैंने पुनः संयत होने की चेष्टा की। मेरा दिल बड़ी तेजी से धड़क रहा था, परन्तु मैंने निश्चय किया कि मैं उस क्षण तक बेहोश नहीं हूँगा जब तक कि एक भी सांस शेष रहेगी।

साहस जुटा कर मैंने दरवाजा बन्द करने का यत्न किया और उसमें मैं सफल भी हो गया। दरवाजा बन्द करके मैं मुड़ा और मेघराज को फर्श पर से उठाते हुए कहा- 'वकील साहब, वकील साहब... साहस जुटाइए, अब दरवाजा बन्द है और हम सब सुरक्षित हैं...।'

मैंने अनुमान से ही सोफे की ओर जेब से निकाल कर माचिस फेंकते हुए उमा को सम्बोधित किया-'जरा दियासलाई जलाइये, इन्हें सोफे पर लिटा देना ही ठीक रहेगा।'
उमा ने दियासलाई जलाई। मैंने देखा कि वकील मेघराज बेहोश नहीं था, फिर भी वह क्षमताहीन था। कटे वृक्ष के समान उसकी देह निढाल थी। मैंने बांहों में भर कर उसे सोफे पर लिटा दिया।

-'लगता है फ्यूज उड़ गया है। क्या कोई मोमबत्ती वगैरह नहीं है?'

- 'रहने दो... रोशनी रहने दो।' उखड़े से स्वर में मेघराज बोला- 'अन्दर का भी दरवाजा बन्द कर लो। बोलो मत... कोई मत बोलो।'

-'धीरज रखिये वकील साहब। उमा, लाओ दियासलाई मुझे दो। मैं जाकर मीटर बोर्ड देखता हूँ कि क्या खराबी है... किधर है मीटर बोर्ड?'

उमा के हाथ से दियासलाई लेकर जैसे ही मैंने घर के अन्दर जाने के लिए तीली जलाई, दूसरे दरवाजे पर बिल्कुल सफेद परिधान में एक भारी भरकम व्यक्ति को खड़ा पाया। उसके मुख और हाथों पर इस प्रकार मिट्टी पुती हुई थी, जैसे कब्र में दबा हुआ कोई मुर्दा कब्र से बाहर आ गया हो। माथे का अधिकांश भाग लाल था... जैसे कोई ताजी चोट लगी हो !

एक क्षण ही मैं यह सब देख सका। इसलिए कि स्वयं मेरे पाँव लड़खड़ा गये और कांपते हुए हाथ से दियासलाई की तीली छूट कर नीचे गिर पड़ी।

उस अंधेरे में भी मैंने देखा कि एक हाथ उमा की ओर बढ़ा और उस बेचारी को ऐसी बेदर्दी से खींचा कि वह किवाड़ से जा टकराई।

मेरे सामने उमा को प्रेत उठा कर ले जा रहा था। परन्तु अब मेरा साहस टूट रहा था। फिर भी मैं उधर झपटा... प्राण देने के विचार से !

अभी मैं प्रेत को स्पर्श भी न कर पाया था कि जाने कहाँ से एक सांप मुझ पर आकर गिरा। दिल को दहला देने वाली फुंकार से कमरा गूंज गया।

मैं उछल कर पीछे हटा। दरवाजा अब साफ था... उमा को वह ले जा चुका था।

फिर मेरे मन ने मुझे धिक्कारा। मानो मेरे मन ने शब्दों में कहा-'बूट पहने रहने से सांप पाँव में नहीं डस सकता। उमा तो गई... कम से कम भय से अधमरे हुए उन दानों को बचाना तो मेरा कर्त्तव्य है।'

कांपते से हाथों से मैंने फिर तीली जलाई। कुण्डली मारे काला सांप मेरी ओर ही फन उठाये था। उस समय यही सूझा कि मैंने छोटी मेज का मेजपोश मेज से खींच कर सांप के ऊपर फेंका और फिर उसके तुरन्त बाद ही छोटी मेज ऊपर उठा कर दे मारी।

फिर एक तीली जलाई और उल्टी मेज पर दोनों पाँव रख कर सांप को कुचल डाला।

मेघराज और श्यामा एक दूसरे से सटे एक कोने में मिट्टी की मूर्ति बने खड़े थे। बस... झपकती हुई आँखों से ही प्रतीत होता था कि वे दोनों जीवित हैं।

कुछ क्षण, केवल कुछ क्षण... सांप को कुचलने के बाद मैं ठगा सा निष्क्रिय खड़ा रहा।

फिर खून ने उबाल खाया। फिर एक बार भ्रम और प्रस्तुत परिस्थिति से ऊपर उठ कर मैंने अपने आपको धिक्कारा !

उमा... जो मेरी पत्नी बनने वाली थी, उमा... जिसके सुकोमल स्पर्श से अभी कुछ देर पहले मैंने स्वर्गीय सुख का आनन्द प्राप्त किया था।

वह उमा...!

लगा जैसे उमा के बिना जीवन व्यर्थ हो।
मैं कमरे में से झपट कर अन्दर घर में पहुँचा। चौक में कुछ अंधेरे में ही इधर-उधर झांक कर देखा। दियासलाई की एक तीली जलाई और अपरिचित स्थान की सीढ़ियों पर चढ़ता हुआ ऊपर छत पर जा पहुँचा।

मुराद महल 61

राजेश की कार का रेडियो अब भी चल रहा था। इस अनर्थ से वह सर्वथा बेखबर थे।

जैसे ही मैंने दृष्टि मुराद महल की ओर उठाई... स्पष्ट देखा कि कोई आकृति महल की सीढ़ियों के किनारे-किनारे पश्चिम की ओर बढ़ रही है।

लगभग एक मिनट तक मैं उधर ही आँखें फाड़े देखता रहा। रात चांदनी थी, परन्तु आकाश बादलों से ढका हुआ था। संयोग ही कहिए... तनिक

सी देर के लिए चांद की जरा सी कोर बादलों से मुक्त हुई और उस चांदनी में मैंने दो वस्तुयें स्पष्ट देखीं।

प्रेत के कंधे पर पड़ी उमा का आंचल हवा में उड़ रहा था।
प्रेत के साथ-साथ ही हवा में वह हड्डियों का ढांचा भी जमीन से कई फीट ऊपर तैरता हुआ चल रहा था।

प्रेत!

परन्तु उमा...?

मैं बिजली की तेजी से उतरा और नीचे उतर कर ड्राइंगरूम में से होता हुआ मिस्टर राजेश मिस्टर राजेश पुकारता हुआ भागा।

मुझे यह बात बहुत बुरी लगी।

मेरे होशो हवास गायब थे और मुझे बैठने के लिए कह कर राजेश बोले-'लो सिगरेट पियो और जो कुछ हुआ है... इत्मीनान और धीरज से मुझे बताओ।'

तब जो सभ्य जगत के लिए सर्वथा अविश्वसनीय है... वह कहानी जितनी जल्दी मैं सुना सकता था, सुना दी। हालांकि यह वही मसल थी कि किसी की जान गई और उनकी अदा ठहरी ! बड़ी तसल्ली से वह मुझे बीच-बीच में टोक कर अजीब-अजीब प्रश्न करते रहे और जयन्त डायरी खोले जाने

क्या-क्या नोट करता रहा।

-'अब आप कृपा करके यह बताइये कि मुझे क्या करना चाहिए? मैं आपके पास एक मित्र की हैसियत से आया हूँ। कृपया मुझे सलाह दीजिये जिससे मैं उस बेचारी की जान बचा सकूँ

-'आप निश्चिन्त रहिए और आराम कीजिए।' जयन्त बोला- 'आपकी भावी पत्नी जल्दी और सही सलामत मिल जायेगी। अरे साहब, आखिर प्रेत भी तो भूतपूर्व इन्सान होता है। उसमें दिल हो या न हो... दिल के अरमान और मुलामियत जरूर होती है। फिक्र की कोई बात नहीं है, कैप्टेन कांड नहीं दुहराया जायेगा।'

-'आप मुझसे क्या करने को कहते हैं?'

जयन्त की बात से मेरा मन रो उठा।

वह बोला- 'आराम !'

राजेश ने मेरे कंधे पर हाथ रक्खा- 'आओ... वकील साहब के यहाँ चलते हैं। जब तक असली बात का पता नहीं लगेगा, तब तक कैसे कुछ कहा जा सकता है? जयन्त ठहरा बेवकूफ, इसके बकने पर ध्यान मत दो। जयन्त, मैं जा रहा हूँ इनके साथ। किसी भी परिस्थिति में कार को मत छोड़ना। किसी भी क्षण कोई नया सन्देश आ सकता है... आओ प्रमेन्द्र !'

तब मैंने समझा था कि जयन्त के बराबर शायद ही कोई वज्र मूर्ख हो ! हम

दोनों कई कदम आगे बढ़ गए थे, तब पुकार कर जयन्त ने कहा-'अगर प्रेत आये तो उससे क्या कहना है?'

- 'उस से रोटियां पकवाना... तुम्हें भूख जो लगी है! उससे कहना कि मेरा इन्तजार न करे और अपने मजे में मस्त रहे। बेवकूफ !' राजेश बोले।

क्षण-क्षण मुझे ऐसा लग रहा था जैसे वे दोनों व्यर्थ समय गंवा रहे हों। राजेश ने अपने साथ टार्च के अतिरिक्त एक बैग भी लिया था, जिसे उन्होंने कन्धे पर लटका रक्खा था। राह में चलते हुए उन्होंने उसी बैग से बिस्कुटों का एक पैकेट निकाला और खोल कर मेरी ओर बढ़ाते हुए कहा-'लो... नाश्ता कर लो।'

-'धन्यवाद ।' मुझे इस बात का खेद था कि वह मेरी मनोभावना को क्यों नहीं समझ रहे हैं?

-'सुनो प्रमेन्द्र !' राजेश बोले- 'देखो... ताजमहल बनाने वाला शाहजहाँ भी अपनी चहेती बेगम के साथ मर नहीं सका था। अतएव आवश्यकता शोक करने की नहीं है, प्रयत्न करने की है। मैं तुम्हारी हालत समझता हूँ। नारी हर रूप में मनोरम होती है। फिर प्रेयसी तो शरीर और मन की स्वामिनी होती है। परन्तु भाई मेरे, इस समय युद्ध जैसी परिस्थिति है। खाना छोड़ना लाभदायक नहीं होगा... लो।

-'मैं खा नहीं सकूंगा, प्लीज मिस्टर राजेश !

-'अच्छा... तुम्हारी इच्छा। तुम चूक गए प्रमेन्द्र ! उस चूक के ही कारण उमा को...।' कुछ क्षण रुक कर वे बोले- 'तुम्हारे ही कारण प्रेतगण उमा को उठा कर ले जाने में सफल हुए। अब तुम फिर चूक रहे हो... कुछ नहीं कहा सकता कि ऐसी परिस्थिति में कब खाना मिलेगा?'

- 'मिस्टर राजेश... उमा मिल जायेगी न?'

- ' आशा तो यही है।'

- 'वह हवा में उड़ने वाला हड्डियों का ढांचा...?'

राजेश ठहाका मार कर हँसे। नीरव गलियारा गूंज उठा।

- 'यही तो तुम्हारी चूक का कारण है। अगर यह भावना तुम्हारे मन में न होती तो तस्वीर का रुख दूसरा होता। गर्वोक्ति नहीं है... एक प्रश्न है, जिसका उत्तर मैं तुमसे नहीं माँग रहा हूँ... यह कि प्रेत मेरे सामने क्यों नहीं आ रहा है?'

फिर मार्ग में न वह बोले... न मैं बोला। बिस्कुट खाते हुए वह मार्ग में चलते रहे।

मेघराज के मकान के निकट पहुँच कर उन्होंने मेरी बांह पकड़ ली और इस तरह वह मुझे ड्राइंगरूम तक ले गये जैसे हम दोनों ही चोर हों। बीच मार्ग छोड़ कर किनारे-किनारे चलते हुए हम दोनों दरवाजे तक पहुँचे।

घर में अब भी अन्धकार था, वैसे एक ही आवाज पर मेघराज ने दरवाजा खोल दिया।

राजेश ने टार्च जला रक्खी थी, उसी की रोशनी में मैंने देखा न केवल श्यामा... बल्कि मेघराज भी रो रहा था। मेरी बांह छोड़ कर राजेश ने मेघराज की बांह पकड़ कर शुष्क स्वर में कहा- 'बतलाइये बिजली का मीटर बोर्ड कहाँ है ?'

मेघराज कुछ बोला नहीं, चुपचाप चल दिया और घर के सहन से होता हुआ मुख्य दरवाजे के अन्दर लगे मीटर बोर्ड तक राजेश को ले गया।

पहली ही जांच में घर पुनः प्रकाशमान हो उठा। बिजली में कोई खराबी नहीं थी, केवल मीटर बोर्ड का मेन स्विच बन्द था।
-'देखा... कितना करामाती प्रेत था, उसके घर में आते ही मेन स्विच बन्द हो गया ! जरा एक तरफ हटिये...।'
हालांकि अब उजाला था, परन्तु फिर भी उन्होंने टार्च नीचे झुक कर

बिल्कुल फर्श से सटा दी। फिर वह सम्भवतः पद चिन्ह देखते हुए आगे बढ़े।

सहन में कुछ देर वह फर्श को गौर से देखते रहे। फिर छत पर जाने वाली सीढ़ियों की ओर बढ़े।

बिना किसी से कुछ कहे सुने वह आठ सीढ़ियां चढ़ गये। नवीं सीढ़ी पर झुक कर कोई वस्तु उठाते हुए उन्होंने मुझे पुकारा-'प्रमेन्द्र !'

-'जी।'

- 'तुम्हारी जेब में सिगरेट तो है न?'

- 'जी हाँ।'

- 'ब्रांड क्या है?'

-'रेड एण्ड व्हाइट।'

- 'वकील साहब से पूछो वह कौन सी सिगरेट पीते हैं?'

अनमने से स्वर में मेघराज ने उत्तर दिया- 'कैप्सटन।

- 'आगन्तुक प्रेत महोदय स्टेट एक्सप्रेस पीते हैं। लो... आकर देखो, वह निशानी भी छोड़ गये हैं।'

सीढ़ियां चढ़ कर मैं ऊपर पहुँचा। सचमुच... स्टेट एक्सप्रेस सिगरेट का टुकड़ा था।

राजेश और ऊपर चढ़े। छत का उन्होंने बड़ी तल्लीनता से निरीक्षण किया। मैं और मेघराज एक ओर बिल्कुल इस प्रकार मौन खड़े रहे जैसे एक दूसरे से सर्वथा अपरिचित हों।

-'लीजिए और देखिए... आइये, दोनों इधर आइये। इधर देखिए। एक, दो... पाँच... उठा कर देखिए... स्टेट एक्सप्रेस ही है न? वही है, इसका अर्थ हुआ कि एक दो नहीं, पाँच प्रेत यहाँ आए थे। अनुमान है कि वह इस वृक्ष पर चढ़ कर छत पर उतरे... बिल्कुल आसान है न उतरना ? फिर यहाँ

बैठ कर उन लोगों ने सलाह मशविरा किया और सिगरेट पी। फैशनेबल प्रेत थे।'

राजेश अपनी धुन में मगन छत से नीचे उतर आये।

ड्राइंगरूम में पड़े मरे सांप का निरीक्षण करके वह बरामदे में आ गये।

बरामदे में फर्श का निरीक्षण करके उन्होंने फुलवारी की ओर अपनी टार्च घुमाई।

मुराद महल 65

-'आइये वकील साहब, वह सामने दरवाजा है और वहाँ से फुलवारी को रौंदते हुये भेड़िये महाशय ड्राइंगरूम के दरवाजे पर आपके अतिथि बने। बड़े खेद के साथ कह रहा हूँ कि यह सब कांड आपकी मूर्खता के कारण हुआ है। आपके ड्राइंगरूम में टंगी बन्दूक शायद शहद लगा कर चाटने के लिए है...? वैसे भेड़िये के मुकाबले में आप भी शेर थे।' राजेश मुस्कराये-'अदालत के कमरे में गरजने वाले शेर ! तो वकील साहब... क्या एक गिलास पानी मिल सकेगा?'

आंसू पोंछती हुई श्यामा गई और पानी ले आई।

पानी पीकर राजेश बोले- 'अब मैं प्रेत को ढूँढने की चेष्टा करूंगा। प्रमेन्द्र, तुम विश्राम करो।'

इतना कह कर राजेश टार्च से मार्ग के चिन्ह देखते हुए चल पड़े।

मैं उनके पीछे बढ़ा। बिना पीछे मुड़े मुराद महल की सीढ़ियों के निकट रुकते हुए वह बोले- 'प्रमेन्द्र !'

- 'जी।'

- 'तुम लौट ही जाओ तो बेहतर होगा।'

मुझे विस्मय हुआ... आखिर यह जान कैसे गए कि मैं पीछे आ रहा हूँ? ऐसा लगता है जैसे पीछे देख सकने की उनमें शक्ति हो।

- 'मिस्टर राजेश, मैं लौट नहीं सकूंगा। आप चाहे इसे पागलपन समझ लें, परन्तु या तो आज रात मेरी उमा मिलेगी या प्रातः मैं भी उसी रास्ते पर चला जाऊंगा जहाँ उमा गई है।'

राजेश हँस दिए।

-'क्या तुम समझते हो कि मजनूं बनना आसान है? अगर तुम इतना साहस जुटा सकते तो मामला पहले ही तीन तेरह हो जाता।'

राजेश की कचोट सह कर भी मैं मौन रहा। वह अपने ढंग से मार्ग के चिन्ह देखते हुए शनैः शनैः आगे बढ़ते रहे। मैं मुराद महल के उन गुम्बदों को निहारता चल रहा था जिन्होंने मेरी प्रेयसी का हरण देखा था और फिर भी मौन और अटल खड़े थे।

हम दोनों मुराद महल की लगभग अर्ध-परिक्रमा करते हुए पश्चिमी और दक्षिणी छोर पर जा पहुँचे।

यहाँ यकायक राजेश रुक गए। बार-बार वह यह चिन्ह ढूँढने की चेष्टा कर

रहे थे, परन्तु कुछ कदम आगे बढ़ते थे और फिर लौट पड़ते थे।

इस उबा देने वाले काम से परेशान सा होकर मैं एक शिला खंड पर जा बैठा। चौंका... पाँवों के नीचे सरसराहट हुई।

सांप था जो रेंगता हुआ निकल गया।

बैठने के लिए दूसरे स्थान की खोज में मैंने दृष्टि उठाई। महल की दीवार के निकट ही बावड़ी थी... मैं उधर ही बैठने के लिए बढ़ा।

मुझे विभाग द्वारा मुराद महल का जो नक्शा दिया गया था, उसमें बावड़ी नहीं थी। कुछ क्षणों के लिए मस्तिष्क उमा से हट कर बावड़ी की ओर घूमा... मैं उठ कर उधर बढ़ा।

पक्का फर्श पार करके जैसे ही मैं बावड़ी की सीढ़ियों पर पहुँचा तो बड़ी कठिनाई से चीख रोक सका।

हवा में तैरने वाला हड्डियों का ढांचा यहाँ बावड़ी के ऊपर तैर रहा था।

सांस रोके मैं पीछे हटा। मारे भय के बावड़ी की ओर पीठ नहीं कर सका। काफी दूर तक राजेश के बिल्कुल निकट तक मैं उल्टा ही चल कर पहुँचा।

भय से मैं फिर कांपने लगा था।

मैंने राजेश की बांह पकड़ कर बावड़ी की ओर संकेत किया।

- 'क्या है?' राजेश ने पूछा।

उनके कान में फुसफुसा कर मैंने कहा- 'हड्डियों का ढांचा !'

वह उधर ही बढ़े।

मेरी इच्छा हुई कि उन्हें रोक लूं।

परन्तु उमा... मैं उन्हें रोक नहीं सका।

अब राजेश के हाथों में टार्च के अतिरिक्त पिस्तौल भी थी।

बावड़ी की सीढ़ियों के निकट पहुँच कर वह रुक गए। मैं अब भी दूर खड़ा था।

दूर से ही मैंने देखा कि वह सीढ़ियों से हट कर दीवार की ओर गए। दीवार का उन्होंने स्पर्श किया।

- 'प्रमेन्द्र!'

दूर खड़ा ही मैं बोला- 'जी।'

- 'आओ... तुम्हारी मुलाकात प्रेत महाशय से कराऊं।'

भारी कदमों से मैं आगे बढ़ा।

- 'लो... उड़ाओ पतंग। यह हड्डियों का ढांचा गत्ते का बना हुआ है और डोर उधर दीवार में लटका हुआ है। देखो।'

जी चाहा कि दीवार से सिर टकरा कर अपनी मूर्खता का पश्चाताप करूं।

डोर ऊपर खींची तो पतंग की तरह गत्ते और तीलियों का बना वह हड्डियों का ढांचा ऊपर मेरे हाथों में आ गया। तोड़-मरोड़ कर उसे मैंने एक ओर फेंक दिया और हल्के मन से सिगरेट और माचिस जेब से निकाली।

राजेश बावड़ी में कई सीढ़ियां नीचे उतर गए थे। यकायक उन्होंने टार्च मेरी ओर घुमा कर कहा- 'इधर आओ प्रमेन्द्र !'

मैं उनके निकट पहुँच कर बोला-'काफी अच्छी बावड़ी है, लेकिन यह नक्शे में नहीं है। सिगरेट लीजिए।'

- 'धन्यवाद !' सिगरेट लेते हुए राजेश ने कहा- 'नक्शे ही ने तो सब गड़बड़ की है। फिर भी तुम्हारा धन्यवाद... मुझे मंजिल तक पहुँचाने का श्रेय तुम्हें ही है।'

-'मंजिल ?' मैंने उनकी सिगरेट जलाते हुए पूछा।

- 'हाँ... हम लोग जिनकी तलाश कर रहे थे, उन्हें पा लिया है। क्या तुम कुछ सुन रहे हो ?'

- 'नहीं तो।'

- 'कान लगा कर सुनो। तुम्हें कुछ सुनाई पड़ेगा।'

एकाग्र होकर मैंने सुनने की चेष्टा की... परन्तु मुझे कुछ भी सुनाई नहीं पड़ा।

- 'सुनाई दिया ?'

- 'नहीं।'

-'दो सीढ़ियां और नीचे उतरो।'

मैंने आदेश का पालन किया।

-'अब कुछ सुनाई पड़ा?'

- 'नहीं।'

- 'और दो सीढ़ियां नीचे उतरो।'

पहले क्षण मैंने सोचा कि यह सब मजाक है! परन्तु दूसरे ही क्षण उनके कथन की सच्चाई प्रकट हो गई। दूर... ऐसा प्रतीत होता था कि बहुत दूर जैसे कोई बातें कर रहा हो !

मन्द स्वर... ऐसा मन्द कि एकाग्र होकर सुनने से ही सुनाई पड़े। सीढ़ियां उतर कर वह मेरे निकट आये-'सुना?'

- 'हाँ... अब सुनाई दिया।'

- 'तुम मेरे साथ प्रेतलोक में चल सकते हो, लेकिन शर्त यह है कि किसी भी घटना से चौंकोगे नहीं, और कुछ भी देख कर भयभीत नहीं होगे। सूचनार्थ मैं यह बता दूं कि मेरे इस झोले में सिर्फ एक बिस्कुट का पैकेट था। शेष आठ हथगोले हैं। आठ हैण्ड ग्रेनेड का अर्थ है कि प्रेतों की पूरी फौज को जला कर खाक किया जा सकता है।'

- 'आप निश्चिन्त रहिए।'

- 'आओ।'
हम दोनों सीढ़ियां उतर कर नीचे पानी के तल तक जा पहुँचे।
देख कर विस्मय हुआ। बावड़ी की दीवार में इतनी दरार थी कि एक व्यक्ति बड़ी सुगमता से उसमें प्रविष्ट हो सकता था।

आवाजें उसी दरार में से आ रही थीं, जो वास्तव में एक सुरंग थी।

आगे राजेश बढ़े। यूं मैं भी सुरंग में प्रविष्ट हुआ... परन्तु कलेजा कांप रहा था।

ज्यों-ज्यों हम दोनों आगे बढ़े... आवाजें तेज होती गईं और मार्ग चौड़ा होता गया।

लगभग सौ कदम चलने के बाद सुरंग का मोड़ आया। एक मोड़... और

फिर कुछ ही कदम बाद दूसरा मोड़।

यकायक राजेश ठिठक कर खड़े हो गए।

यह अन्तिम मोड़ था और अन्तिम मोड़ पर अंधेरा भी नहीं था।

राजेश बिल्कुल दीवार से चिपक गए और फिर उन्होंने झांक कर देखा।

उत्सुकतावश मैंने भी सिर आगे बढ़ाया।

कल्पना से भी अधिक भव्य मेरी दृष्टि के सम्मुख मेहराबदार हॉल था जिसमें उजाला था। मुझे स्पष्ट वह नक्काशीदार खम्बा दिखाई पड़ा, जिसके सहारे उस शानदार हॉल की छत खडी थी।

तभी किसी की हॉल में जोर से हँसने की आवाज गूंजी।

राजेश आगे बढ़े... दबे पाँव हम दोनों दरवाजे पर जा पहुँचे।

हॉल के एक कोने में मसनद लगी थी। मन में ऐसी शंका उदित हुई जैसे प्रेतों का दरबार लगा हो ! पाँच व्यक्ति... और एक स्त्री !

स्त्री... मैं चौंका !

सचमुच मसनद के निकट एक स्त्री ही तो खड़ी थी। अजीब सी वेष-भूषा थी !

लंहगा, चोली... और बस !

नहीं... यह उमा नहीं थी।

फिर कहकहे की आवाज गूंजी।

प्रेत हो या न हो... परन्तु हँसने वाला व्यक्ति वही था जो उमा को उठा कर लाया था। हालांकि अब तो खूब साफ सुथरे कपड़े पहने था।

वह उठा और उसके उठते ही मैंने उसे पहचान लिया।

- 'तुम हो बेवकूफ बिन्दी ! तुम्हारी कसम... संयोग ही समझो कि ऐसा हो गया, वरना कोई खास इरादा मेरा नहीं था।'

- 'तो फिर करो मेरे हवाले।'

झूमता हुआ वह व्यक्ति उसके निकट आया-'क्या करोगी तुम उसका ?'

- 'चीर कर दो कर दूंगी।'

भारी भरकम व्यक्ति का फिर कहकहा गूंजा। उसने उस निर्लज्ज स्त्री की कमर में हाथ डाल कर उसे ऊपर उठाया- 'बेवकूफ !'

-'तो फिर अपने मन की ही करोगे न?' उसके हाथों में झूलती सी वह औरत बोली।

उस व्यक्ति ने उसे फिर भूमि पर टिकाते हुए कहा-'अगर मैं कहूँ हाँ... तो ?'

- 'मेरा नाम बिन्दी है।'

- 'तो क्या जवाब में मुझे अपना नाम बताना पड़ेगा?'
- 'मैं अपनी जान दे दूंगी, लेकिन सौत सहन नहीं करूंगी।'

- 'बको मत।' अबकी बार वह गरजा।

उस भारी भरकम डील-डौल वाले आदमी के सम्मुख वह युवती भला क्या जोर लगा सकती थी? हाथी और हिरणी की उपमा भली भांति दी जा सकती है। यूं ही हाथ से धकेला तो सम्भल न सकी... गिर पड़ी।

परन्तु साहस में युवती भी कम नहीं थी। उठ कर वह चीखी-'मुझ पर हाथ चलायेगा तू?'

जाने क्यों अब उस व्यक्ति का क्रोध उतर गया। वह आगे बढ़ा और एक ही बांह में उस युवती को अपने अंक में समेटते हुए बोला- 'मेरा तो जी चाहता है कि तुझ पर हाथ नहीं तलवार चलाऊं। जब तू तैश में आती है तब खून उतर आता है मेरी आँखों में। बेवकूफ... क्या पहली सौत तेरे नहीं है? एक और सही !'

- 'नहीं।' वह चीखी।

- 'हाँ।' प्रत्युत्तर में वह भी चीखा- 'तुझे हाँ करनी ही होगी... और तू हाँ करेगी।'

-'छोड़ मुझे।' वह तड़पते हुए बोली।

- 'तो तू नहीं मानेगी ?'

- 'मैं उसका मुँह नोच लूंगी।'

-'और मैं तेरी बोटी-बोटी नोच लूंगा। अब तू देख तमाशा ! शेरू... शेरू... रस्सी ला।'

मसनद के सहारे बैठा एक व्यक्ति उठा और उसने कुछ धीमे स्वर में कहा।

उत्तर में वह गरज कर बोला- 'नसीहत नहीं चाहिए... रस्सी लाओ।'

वह व्यक्ति कहाँ गया, यह मैं नहीं देख पाया। अलबत्ता कुछ ही क्षणों के बाद वह रस्सी ले आया।

गजब की शक्ति थी उस व्यक्ति में। एक हाथ में रस्सी थी और दूसरे हाथ में मछली की तरह तड़पती वह युवती । सिर्फ एक हाथ से उसने उस युवती को हॉल के बीच वाले नक्काशीदार खम्भे से बांध दिया। हिनही मान उन

- 'आया दिमाग ठिकाने या और तमाशा दिखाऊं?'

बंध कर भी उस युवती का मनोबल थका नहीं था। घृणा पूर्ण स्वर में वह बोली-'तमाशा तू क्या मुझे दिखायेगा... मैं दिखाऊंगी तुझे तमाशा। अगर तेरे चिथड़े न कर दूं... अगर उसे चीर कर न रख दूं...?'

-'तो देख तमाशा ! आज तू तमाशा ही देख। शेरू... ला तो उसे !'

जैसे नाटक का मध्यान्तर हो, इस प्रकार हॉल में मौन छा गया। ि

कुछ मिनट बाद ही।

उमा... हाँ, वह उमा ही थी जिसे वह व्यक्ति खींचता हुआ लाया जिसे शेरू कह कर सम्बोधित किया जा रहा था।

मेरा मन खुशी से भर गया। मैं नहीं जानता था कि वह लोग कौन हैं! परन्तु उमा को जीवित और सही सलामत देख कर मन की कली खिल गई। एकी

मैंने राजेश को कचोटा। परन्तु राजेश ने मुझे चुप रहने का संकेत किया।

उस व्यक्ति ने उमा की कलाई थाम ली। ईर्ष्या से जल उठा मैं !

-'मैंने तुझे माफ कर दिया है। अब मैं तुझे जान से नहीं मारूंगा, तुझसे प्यार करूंगा। क्या नाम है तेरा ?'

उमा उत्तर देने के बजाए कलाई छुड़ाने की चेष्टा कर रही थी।

बंधी हुई युवती खिलखिला कर हँसी।

उसने उमा को झटके से अपनी ओर खींचा। उस समय की परिस्थिति यह थी कि मेरे तन बदन में आग लग गई। लेकिन राजेश अब भी निश्चल और शान्त खड़े थे।

परन्तु जोश छलका और मैं कूद कर धमाक से हॉल में जा पहुँचा।

मैं जानता था कि उस भारी भरकम व्यक्ति से उलझ कर निपटना मेरे बूते की बात नहीं है। परन्तु राजेश मेरे साथ हैं... यह बहुत बड़ा आसरा था मेरे लिए।

मेरे यकायक आ धमकने से वहाँ उपस्थित सभी व्यक्ति चौंक पड़े। पूरी शक्ति से मैंने उस व्यक्ति को धकेला। वह गिर तो नहीं सका, परन्तु मेरे इस

प्रयत्न से उमा की कलाई उससे छूट गई। उमा मुझसे ऐसे लिपट गई जैसे वृक्ष से लता ! मैं निहाल हो गया।

- 'कौन है तू?' वह व्यक्ति गरज कर बोला।

-'मैं उमा का पति हूँ। मैं वही हूँ जिस पर तुम सांप फेंक कर इस बेचारी को उठा लाए थे। तुम्हारा ढोंग खुल चुका है। सब जान गए हैं कि तुम प्रेत

नहीं हो। तुम्हारे उस कागजी हड्डी के ढांचे को पतंग बना कर कल गाँव के बच्चे उड़ायेंगे।'

उमा ने मेरे वक्ष में मुँह छुपा रखा था।

- 'शेरू !' वह चिल्लाया-'मार दे गोली इस कबूतर के जोड़े को।'

अब भी मुझे विश्वास था कि राजेश सब कुछ देख रहे हैं। मैं जानता था कि उनके थैले में हैण्ड ग्रेनेड हैं। अतएव मैंने दबंग स्वर में कहा-'चाहते हो तो गोली मार दो। लेकिन मेरी राय है कि समय बेकार मत करो। तुम्हारी पोल खुल चुकी है और मुराद महल पर बम बरसाने के लिए अब हवाई जहाज आने ही वाले हैं।'

- 'बको मत !' वह चीखा।

उमा ने घबरा कर अपने बंधन और भी कड़े कर दिए। मैंने भी जोर से कहा-'चीखो मत ! मैं जानता हूँ कि जब मुराद महल की छत भरभरा कर गिरेगी, तो तुम्हारे साथ हमारी भी यहीं जीवित समाधि बनेगी। एक शरीफ आदमी की हैसियत से मैं कह रहा हूँ कि चीखना पुकारना छोड़ कर शान्ति से मरने की तैयारी करो। आखिर थोड़ी बहुत गिरह की अक्ल तो तुम्हारे पास है ही... सोचो तो मैं क्यों बिना हथियार वगैराह के तुम्हारे पास आया हूँ? सिर्फ इसलिए कि अपनी पत्नी के बिना मैं जीना नहीं चाहता और हम दोनों को साथ-साथ मरने से तुम रोक नहीं सकते।'

- 'शेरू !'

- 'जी सरकार।' पास खड़ा शेरू बोला।

'इन दोनों को ले जाकर बन्द कर दो। इनका शिकार सुबह करेंगे। बिन्दी रानी... अब तो खुश हो?' वह उस युवती के बंधन खोलने लगा।

-'चलो।' अपनी लाल आँखें निकाल कर शेरू ने मुझे चलने का संकेत किया।

मैंने उस व्यक्ति की ओर देखा। वह व्यक्ति उस युवती के बंधन खोल रहा था। युवती विजय के गर्व से मुस्करा रही थी।

मैंने दरवाजे की ओर देखा... उधर राजेश का नामो-निशान भी नहीं था।

तो क्या राजेश वापस चले गये?

भय से फिर कलेजा कांप गया।

फिर भी मैंने उमा के सम्मुख साहसी होने का परिचय देते हुए कहा- 'आओ डार्लिंग... भाग्य के खेल हैं, देखती चलो।'

मुझ पर अपना अधिकांश भार डाल कर उमा मेरे साथ चली। हॉल की पूर्वी दीवार से सटा हुआ जीना था, उसी की सीढ़ियां चढ़ा कर शेरू हम दोनों को एक अंधेरे और बदबूदार कक्ष में ले गया।

मैं स्वेच्छा से कैदी बना था। परन्तु मुझे इतनी दुर्गन्ध भरी जगह में कैद

किया जायेगा ऐसा सोचा भी न था। शेरू ने बाहर से दरवाजा बंद कर दिया।

- 'मैंने कल्पना भी नहीं की थी कि तुम यहाँ तक आ पहुँचोगे ! सुनो, जो अभी तक नहीं कह पाई थी वह अब कहती हूँ। मैं जीने के लिए ही तुम से प्यार नहीं करती थी, मरना है फिर तुम्हारी सुहागिन बन कर मरूंगी।' कम्पित से स्वर में उमा ने कहा।

- 'घबराओ नहीं उमा ! आशा मत छोड़ो, हिम्मत रक्खो। मेरे साथ मिस्टर राजेश भी आये हैं। मुझे उन पर ईश्वर से भी अधिक भरोसा है। वह इसी तहखाने में कहीं होंगे। डर कर भागना उनकी प्रकृति नहीं है। उमा... यह दुर्गन्ध कैसी है?'

सहज भाव से उमा ने उत्तर दिया- 'हम भेड़ियों के साथ बन्द हैं।'

हे राम ! क्या कोट मुराद और महल में चमत्कार ही चमत्कार देखने हैं?

विस्मय से चौंकते हुए मैंने दियासलाई जलाई। कक्ष में एक दो नहीं... पूरे आठ भेड़िये थे। ये हिंसक पशु गाय और बकरियों की तरह शान्त आँखे मूंदे पड़े थे।

- 'मुझे लाकर यहीं बन्द किया गया था। एक दफा तो सोचा था कि बस अब अन्तिम घड़ी आ गई है। लेकिन ऐसा लगता है जैसे यह सब भेड़िये की खाल में भेड़ हैं। सभी मौत से बाजी लगा कर सो रहे हैं।'

इस अजीब करिश्मे को एक बार मैंने फिर दियासलाई जला कर देखा।

ऐसा क्यों है... यह रहस्य तो मैं नहीं समझ पाया। अलबत्ता उस कक्ष में जो दुर्गन्ध उठ रही थी... वह इन्हीं भेड़ियों के मल-मूत्र के कारण थी।

उमा से मन की बातें कहने-सुनने को एकान्त मिला भी तो कहाँ...?

मारे दुर्गन्ध के मेरा दम घुट रहा था। निकट उमा थी, परन्तु मैं सोच रहा था कि कल्पना का रौरव नरक भी ऐसा ही होता होगा?

मैंने फिर एक दियासलाई की तीली जलाई। कक्ष के कोने में एक बिना पल्लों का दरवाजा दिखाई पड़ रहा था। शायद कहीं किसी और स्थान पर जाकर वह दरवाजा निकलता होगा। मेरा यहाँ की सड़न से सिर फटा जा रहा था।

परन्तु वहाँ तक जाया जाए तो कैसे ?

बीच में भेड़िए मौत से बाजी लगाए सो रहे थे। पाँव पड़ने से जाग भी तो सकते थे?

- 'उमा... किसी तरह हम दोनों वहाँ तक पहुँच जाएं तो ?'

- 'चलो।'

-'चलें कैसे... बीच में ये...?'

- 'ये कुछ कहेंगे नहीं, देखो...।'

उमा मुझसे अधिक साहसी निकली। वह उन्हीं के बीच से सुगमता से निकल गई।

मैंने भी उसी का अनुकरण किया। मेरा एक पाँव तो भेड़िए के ठीक कपोल पर पड़ा। लगा जैसे यह सब मिट्टी के बने खिलौने हों !

हम दोनों सुरक्षित उस छोटे से दरवाजे तक पहुँच गए। दियासलाई की एक तीली और जला कर देखा तो यह सीढ़ियां थीं जो नीचे की ओर गई थीं।

अब दियासलाई में कुछ ही तीलियां शेष रह गई थीं। अतएव एक ही बार में सीढ़ियों का अनुमान करके मैंने उमा की बांह पकड़ ली और अंधेरे में ही सीढ़ियां उतरनी आरम्भ कर दीं।

लगभग तीस सीढ़ियां उतरने के बाद मार्ग अवरुद्ध हो गया। मैंने फिर तीली जलाई। बढ़िया संयोग था कि यहाँ पर एक टार्च रक्खी मुझे मिल गई। दियासलाई समाप्त हो जाने का जो भय था, वह समाप्त हो गया।

सांस लेने लायक हवा मिल रही थी और यह जानने की आवश्यकता नहीं थी कि यह हवा कहाँ से आ रही है। आगे एक दरवाजा और था, परन्तु उसमें पल्ले और ताला लगा था। यूं समय यहाँ भी खड़े-खड़े बिताया जा सकता था, परन्तु दरवाजे के पल्ले पुराने थे और मेरा विश्वास था कि दो-चार धक्कों से उन्हें गिराया जा सकता था।

टार्च मैंने उमा के हाथ में दी और दरवाजे पर लातें बरसानी आरम्भ कर

दीं। मेरा अनुमान सही था। अपने साथ जीर्ण दीवार का भी कुछ अंश लेकर दरवाजे के पल्ले धड़ाम से दूसरी ओर गिर पड़े।

उमा के हाथ से टार्च लेकर मैं उस कमरे में प्रविष्ट हुआ जिसे खजाना कहना अनुपयुक्त न होगा।

चांदी की सिल्लियां और सोने के पासे... वहाँ ऐसे पड़ी थीं जैसे अनाज की दुकान पर भिन्न-भिन्न प्रकार के अनाजों के ढेर पड़े हों।

टार्च की रोशनी मैंने उमा के चेहरे पर डाली। इन परिस्थितियों में भी उसका चेहरा खुशी से दमक उठा था।

-'देखा डार्लिंग ! पुरातत्व विभाग जब यह जानेगा कि मेरे प्रयत्नों से इतनी दौलत सरकार को मिली है... तो सदा सर्वदा के लिए मेरी उन्नति का मार्ग खुल जाएगा।'

- 'दौलत... किसे चाहिए दौलत...?'

कक्ष में एक आवाज गूंजी। विचित्र सी जनानी आवाज। चीखती हुई उमा मुझसे लिपट गई।

-'दौलत... ही ही ही...!'

स्वयं मेरा हाथ कांप गया। कांपते हाथ से मैंने टार्च घुमाई तो मैं भी चीख को न रोक सका। प्रेत का भय जो दूर हो गया था... पुनः जाड़े के बुखार की तरह चढ़ आया।

कमरे के एक कोने में चीथड़ा सा लपेटे एक स्त्री प्रेतनी सी खड़ी थी।

क्षण मात्र से अधिक मैं उसे नहीं देख सका। उसके चेहरे पर माँस का चिन्ह भी नहीं था। सांस लेने की प्रक्रिया बिल्कुल डायन जैसे थी।

-'दौलत लेने आया है...? दौलत... ही ही ही...!'

आग जैसी जलती उंगलियों का स्पर्श पाकर मैं चौंका। प्रेतनी के दोनों हाथ मेरे कंठ पर आ गये थे।

मैं कांप रहा था फिर भी मैंने प्रतिरोध करने के लिए हाथ चलाया।

परन्तु कांपते हाथ का धक्का भी बेचारी प्रेतनी न सह सकी। चीत्कार करती हुई वह फर्श पर गिर पड़ी।

यूं अन्तर कांप रहा था, परन्तु फिर भी क्षणिक विजय से प्रभावित होकर मैंने फिर उस पर टार्च का प्रकाश डालते हुए डपट कर पूछा- 'कौन हो तुम ?'

वह पीड़ा से तिलमिला रही थी, परन्तु फिर भी आँखें निकाल कर बोली-'मैं प्रेत हूँ।'

- 'बको मत !' मैं चीखा- 'सच बताओ... तुम कौन हो?'

दयनीय स्वर में वह बोली- 'मैं प्रेत हूँ। उसने मुझे भेड़ियों में डाल दिया था।

भेड़ियों ने मुझे खा लिया और फिर मैं यहाँ इस खजाने में आकर प्रेत बन गई। लेकिन... क्या... तुम भी प्रेत हो ?' उमा को सहारा देता हुआ मैं उस प्रेतनी जैसी स्त्री के निकट ही बैठ गया। उस स्त्री का माँस बिल्कुल सूख गया था, रंग एकदम पीला पड़ गया था। परन्तु अबकी बार गौर से देखने पर वह प्रेतनी नहीं लगी।

साहस करके मैंने उसकी कलाई पर हाथ रक्खा। फिर नाड़ी देखी, तब कहीं जाकर विश्वास हुआ कि वह एक रोगी स्त्री है।

- 'तुम कौन हो ?'

-'मैं प्रेत बन गई हूँ।'

- 'हाँ हाँ बाबा... तुम प्रेत बन गई हो। परन्तु यह तो बताओ कि प्रेत बनने से पहले तुम कौन थी?' मैंने उसके जलते माथे पर हाथ फेरते हुए पूछा।

- 'पहले... पहले तो मैं... पहले मैं साहूजी की धर्मपत्नी थी। ककेर गाँव का नाम तो तुमने सुना होगा?'

'हाँ।' मैंने झूठ कहा।

- 'ककेर गाँव के साहू राधारमण को नहीं जानते ?'

- 'नाम सुना है।'

उसने निश्वास ली-'मैं उनकी धर्मपत्नी हूँ। वह तो मर कर स्वर्ग चले गए। परन्तु मैं... तुम्हें पता है न, जब उनकी हवेली पर शेरसिंह डाकू ने डाका

डाला था। उन्हें तो उसने बन्दूक से मार डाला था, परन्तु मुझे वह अपने साथ उठा लाया था। डाकू ने मुझे बहुत मारा। कहता था कि मैं उसकी रखेल बन जाऊं।

लेकिन मैंने अपना धर्म नहीं छोड़ा। फिर वह मर गया। तुमने तो सुना होगा कि पुलिस के हाथों मारा गया था?'

-'हाँ।'

-'फिर वह मर कर प्रेत बन गया। जब वह मर गया तो पुलिस ने मुझे जंगल वाले खेमे में पा लिया था और फिर मेरे पति की हवेली पहुँचा दिया था। परन्तु वह तो मर कर प्रेत बन गया था। एक रात काले घोड़े पर आया और मुझे उठा कर यहाँ नरक में ले आया। जानते हो, इस नरक में एक और प्रेतनी भी रहती है... उसका नाम बिन्दी है।'

-'जानता हूँ।'

-'उस प्रेतनी ने शेरसिंह डाकू के प्रेत से कह कर मुझे एक दिन भेड़ियों में डलवा दिया। बस... मैं मर गई और फिर प्रेत बन गई। मेरा गला सूख गया है... मुझे पानी दो।'

अब उमा को भी विश्वास हो गया था कि वह स्त्री केवल भ्रम की शिकार है। उसने स्नेह-पूर्वक उसके माथे पर हाथ फेरते हुए कहा-'बहन, भला यहाँ पानी कहाँ मिलेगा ?'

-'उधर उस सुराही में मेरा पानी रक्खा है। एक प्रेत आता है... वह बहुत भला है। रोज मुझे पानी और रोटी दे जाता है।'

शायद उमा भी प्यासी थी। वह तेजी से उस ओर लपकी जिधर उस स्त्री ने संकेत किया था।

सुराही वहाँ थी... थोड़ा सा पानी उमा ने उस स्त्री के मुँह में डाला।

- 'इस पानी में तो बदबू आ रही है! अजीब सी बू है... जरा सूंघो तो ?'

- 'यह बड़ा अच्छा पानी है ! पानी पीने के बाद बहुत अच्छी नींद आती है। थोड़ा और पिलाओ... बड़े अच्छे सपने दिखाई पड़ते हैं।'

पानी पीने के पश्चात उस स्त्री ने आँखें मूंद लीं।

उमा ने मेरे कान में फुसफुसा कर कहा- 'इस स्त्री को तो बड़ा तेज बुखार है।'

-'सो तो है, परन्तु हम लोग कर क्या सकते हैं? हमें यहाँ बैठे थोड़े ही रहना है। यहाँ तो रास्ता बन्द है। एक तरकीब दिमाग में आई है... फौरन उठो ।'

-'सुनूं तो क्या तरकीब है...?

-'चांदी की सिल्लियां देखती हो न? एक सिल्ली लिए चलता हूँ। यह हथोड़े का काम देगी। इससे हम कैदखाने का वह दरवाजा तोड़ने में

कामयाब हो जायेंगे, जहाँ से मुक्ति की राह निकाली जा सकती है। आओ।'

मैं बढ़ कर एक चांदी की सिल्ली उठाना ही चाहता था कि दूर से टार्च के प्रकाश का सा आभास पाकर आशा की नई किरण मेरे मन में जाग्रत हुई।

मैंने पुकारा-'राजेश...!'

परन्तु प्रत्युत्तर नहीं मिला।

अलबत्ता कोई सीढ़ियों से उतर कर आ रहा था। मैंने तनिक आगे बढ़ कर अपनी टार्च ऑन की।

आगन्तुक वही चोली और घाघरी वाली निर्लज्ज औरत थी... जिसे विन्दी कह कर सम्बोधित किया गया था।

मैंने मन में सोचा औरत ही तो है ! उमा को धीमे से सम्बोधित किया-'डरना मत।'

-'दरवाजा तुमने तोड़ा है?' अपनी टार्च का प्रकाश मेरे मुख पर डालते हुए उसने पूछा।

मैंने उत्तर दिया-'हाँ !'

- 'कैद से रिहा होना चाहते हो ?'

उपेक्षा से मैंने कहा- 'शायद आप हमें कैद से रिहा कराने ही आई हैं?'

- 'हाँ, आई तो इसी इरादे से हूँ... अगर तुम मेरी शर्त मान लो तो।'

- 'बड़ा रहम है आपके दिल में?'

- 'फिजूल की बातें मत करो। अगर रिहा होना चाहते हो तो आओ मेरे साथ। वह कहाँ है... यह... इसे तुम्हें अपने साथ ले जाना होगा !'

उसने टार्च की रोशनी उस स्त्री पर डाली, जो पानी पीने के बाद अचेत होकर फर्श पर पड़ी थी।

यूं बिन्दी का सुझाव बुरा नहीं था। परन्तु दिक्कत यह थी कि बिन्दी पर विश्वास नहीं किया जा सकता था। मैंने सुझाव दिया- 'मैं शौक से इसे अपने साथ ले जाऊंगा, लेकिन आप मुझे निरापद राह दिखा दीजिये।'

- 'इतना समय नहीं है। तुम मुझ पर विश्वास करो भाई, मैं तुमसे किसी

प्रकार का छल नहीं कर रही हूँ। यह मेरी और शेरसिंह की आपसी रंजिश की बात है जिसके कारण मैं तुम्हें यहाँ से निकाल रही हूँ।'

शेरसिंह कौन... शेरसिंह डाकू तो मर चुका है?

कोई भी हो... बिन्दी की बात पर विश्वास कर लेना ही मुझे उचित जंचा।

उस समय मेरी स्थिति कैदी जैसी थी और एक क्षण की भी जीवन की

गारन्टी नहीं थी।

- 'मुझे जल्दी हाँ ना का जवाब दो।' वह फिर बोली।

- 'चलिये।'

- 'तो उठा लो फिर इसे।'

बुखार से जलती उस अचेत स्त्री को मैंने उठा कर कन्धे पर डाल लिया। उसके शरीर में दुर्गन्ध व्याप्त थी और बदन तवे की तरह जल रहा था।

हम चारों उस कक्ष तक पुरानी राह से गुजरे, जहाँ भेड़िये मौत से बाजी लगाये सो रहे थे। दरवाजा खुला ही था। बिन्दी के साथ उस कक्ष से निकल कर फिर और सीढ़ियां चढ़ी। यह वही मसल हुई कि आसमान से गिरे तो खजूर में अटके !

सीढ़ियां पार करके जब सब एक बड़े हॉल में पहुँचे तो बिन्दी बोली-'बस आ गये... अब कुछ क्षण के बाद तुम सब खुली हवा में होगे। इस औरत को किसी अस्पताल में दाखिल करा देना...।'

कह न सकी बिन्दी पूरी बात कि कक्ष अट्टाहस से गूंज उठा।

उसी क्षण दियासलाई जली और मशाल जल उठी। पूरे कक्ष में उजाला छा गया।

वही भारी भरकम व्यक्ति... और साथी शेरू।

क्षण मात्र के लिए मुझे लगा कि यह सब मिली भगत है! बिन्दी धोखे से हमें यहाँ लाई है।

परन्तु यह मेरा भ्रम था। भारी भरकम व्यक्ति ने बड़ी निर्ममता से उस बिन्दी पर झपट कर उसके बालों को पकड़ कर जो झटका दिया तो वह बेचारी कटे वृक्ष की तरह धड़ाम से फर्श पर गिरी।

उमा मुझसे इस प्रकार सट गई जैसे भय के कारण मुझमें समा जाना चाहती हो ! मैंने उस बीमार स्त्री को वहीं फर्श पर लिटा दिया और पीछे हटना आरम्भ कर दिया।

वह व्यक्ति बिन्दी को इतनी बुरी तरह पीट रहा था कि कलेजा मुँह को आता था।

पीछे खिसकता खिसकता मैं उमा सहित बिल्कुल दरवाजे तक आ गया था और मेरे लिए वह अच्छा संयोग था कि मैं वहाँ से खिसक जाऊं। वह उसे पीटने में तल्लीन था और मशाल लिये शेरू उस दृश्य को बड़ी करुणा से... किन्तु मौन होकर देख रहा था।

शनैः शनैः मैं पीछे हटा और फिर झटके के साथ मैंने उमा को पीछे खींच लिया। आशा थी अब मार्ग साफ होगा और मैं जिस राह से आया था, उसी राह से उमा सहित लौट जाऊंगा।

ठीक उसी समय कक्ष के निकट... जहाँ भेड़िये थे, मुझे ऐसा लगा जैसे

मुझे आसमान से किसी ने पुकारा हो- 'प्रमेन्द्र !'

मैं चौंक कर रुक गया।

- 'पीछे हटो।' आदेश मिला।

आवाज पहचानी सी लगी, यकीनन राजेश का कंठ स्वर था।

मैं उमा सहित पीछे हट गया।

धड़ाम से राजेश कूद कर सम्मुख आ गए। सोचा... निश्चय ही इनमें छछुन्दर की भांति छत से लटक जाने की क्षमता है।

-'प्रमेन्द्र, तुम हद दर्जे के बेवकूफ प्रेमी हो। तुमने उस वक्त जोश में आकर सारा काम खराब कर दिया। चलो ऊपर... वहाँ दो आदमियों के बैठने लायक जगह है। जब तक मैं न कहूँ वहाँ चल कर बैठो।'

ऊपर टार्च करके मैंने देखा, सीढ़ियों के मोड़ पर एक आला सा बना हुआ था, जैसा कि आम-तौर पर ईरानी शैली की इमारतों में होता है। लगभग दस फीट की ऊंचाई पर वह आला था। राजेश के और मेरे कन्धों पर पाँव रख कर पहले उमा चढ़ी।

चढ़ने से पहले मैंने कहा-'राजेश जी, वह व्यक्ति उस स्त्री को बहुत बुरी तरह से पीट रहा है। सुनिए... यहाँ तक बिल्कुल स्पष्ट आवाज आ रही है। मैं तो क्षमताहीन व्यक्ति हूँ, क्या आप उस स्त्री की कुछ सहायता नहीं कर सकते?'

-'बको मत, चुपचाप ऊपर चढ़ जाओ। यह सब तुम्हारे कारण ही हो रहा है।

मुराद महल 81
राजेश मुझसे कुपित थे। हालांकि मैं उनसे पूछना चाहता था कि वह स्त्री पिट रही है तो इसमें मेरा क्या दोष? परन्तु उन्होंने मुझे इतना घबरा दिया कि मैं कुछ भी न पूछ सका।

चढ़ रहा था कि तभी ऊपर सीढ़ियों से फायर हुआ... धांय।

राजेश ने मेरा हाथ पकड़ कर खींचा और सीढ़ियों की ओट में हो गए।

बेचारी उमा ऊपर रह गई... असहाय... अकेली।

धांय ! फायर फिर हुआ।

लगता था कि वह अब निकट ही आ गया था।

मशाल का क्षीण सा प्रकाश सीढ़ियों पर फैल गया था।

राजेश थे कि दीवार से सटे खड़े थे।

मैं हैरान था कि वह अपनी पिस्तौल का क्या अचार बनायेंगे?

- 'खबरदार !' नीचे से भी आवाज आई।

हम दोनों ओर से घिर गए थे।

राजेश ने मेरा हाथ दबाते हुए धीमे स्वर में कहा-'हिम्मत रखना और साहस मत छोड़ना। हाथ ऊपर उठा लो।'

मैं और राजेश हाथ उठाये ऊपर की ओर नहीं चढ़े... नीचे की ओर उतरे।

राम जाने कहाँ छोड़ा था... इस समय राजेश के कन्धे पर झोला भी नहीं था।

ऊपर से वही भारी भरकम व्यक्ति नीचे हॉल में उतर कर आया। उसके एक हाथ में पिस्तौल थी और दूसरे हाथ से वह बिन्दी के बाल पकड़े हुए था।

बेचारी बिन्दी !

नीचे के तहखाने में खूब प्रकाश था। गैस की लालटेन वहाँ जल रही थी।

राजेश की शक्ल देखते ही वह भारी भरकम व्यक्ति चौंका-'तुम...?'

हाथ नीचे करते हुए राजेश मुस्कराये-'हाँ शेरसिंह, याद है न पाँच साल पहले की बात? मैंने कहा था न कि जिस दिन मैं मुक्ति देने आ गया उस दिन संसार के बंधनों से छूट कर तुम मोक्ष पा जाओगे। आज मैं आ गया हूँ।'

मैंने नोट किया कि राजेश को देखते ही उस व्यक्ति का चेहरा उतर गया।

-'राजेश बाबू, सांप तभी डसता है जब कोई उसे कुचलने को कोशिश करे।

मेरा ईश्वर जानता है कि मैं तुम्हारी इज्जत करता हूँ। यह भी सही है कि मैं तुमसे डरता हूँ। इसलिए क्षमा करना... मैं तुम्हारी जेब देखना चाहूँगा।'

मैं चकित था यह व्यापार देख कर कि राजेश ने अपने दोनों हाथ फिर उठा दिए। राम जाने कहाँ गंवाई... अब उनके पास पिस्तौल भी नहीं थी। उस व्यक्ति ने जिसे राजेश शेरसिंह कह कर सम्बोधित कर रहे थे, पहले राजेश की तलाशी ली और फिर मेरी।

-'आओ बैठो। तुम भी आओ जी।'

शेरसिंह ने राजेश के साथ-साथ मुझे भी मसनद पर बैठाया।

बात इस प्रकार आरम्भ हुई- 'सुनूं तो राजेश बाबू अब मुझसे क्यों नाराज हैं? अब तो सरकारी तौर से मैं मर चुका हूँ, मेरी लाश जलाई जा चुकी है। यहाँ तक कि उसके बाद मैंने कोई डाका भी नहीं डाला है।' शेरसिंह इस प्रकार राजेश के कन्धे पर हाथ रख कर बोला जैसे पुराना दोस्त हो।

-'तुम जानते हो शेरसिंह, मैं क्यों आया हूँ?'

शेरसिंह ने लहू लुहान बिन्दी की ओर संकेत करके कहा-'कसम इस छिनाल की, मुझे नहीं मालूम।'

- 'कैप्टेन रघुनाथ की हत्या...!'

- 'कौन कैप्टेन रघुनाथ?' शेरसिंह ऐसे चौंका जैसे कैप्टेन का नाम पहली बार सुना हो।

- 'शेरसिंह बनो मत। कैप्टेन रघुनाथ की हत्या... एक। अपने आदमियों के जरिए विकृत लाश को पहचानवा कर चार सौ बीस का अपराध... दो। साहू राधारमण की पत्नी को यहाँ लाकर सिर्फ इसलिए घुला घुला कर मारने की साजिश की कि उसके नाम से जाली वसीयत करा कर तुम उसकी सारी जायदाद अपने भतीजे के नाम करा लो...।'

-'यह झूठ है।'

राजेश कहकहा मार कर हँसे- 'यूं नाम बदल कर तुमने अपने भतीजे को उस अभागी का भतीजा बना दिया था। लेकिन तुम्हारा भाग्य कि वह वसीयतनामा

पिछले हफ्ते जांच के लिए लेकर अदालत ने नई दिल्ली भेजा था और वहाँ वह जाली प्रमाणित हो चुका है। मेरा ख्याल है कि तुम्हारे भतीजे महोदय अब तक गिरफ्तार हो चुके होंगे। हाँ तो यह साजिश हुई नम्बर तीन। नम्बर चार भी कोई कम छोटा अपराध नहीं है। कोट मुराद में तुमने व्यर्थ प्रेत का आतंक फैला दिया है। शेरसिंह, जितना मैं तुम्हें जानता हूँ इतना शायद ही कोई दूसरा जानता हो। जब मैंने सुना कि प्रेत भेड़िये का रूप धारण कर लेता है, मैं तभी समझ गया था कि अफीम पिला कर भेड़िये पालने वाले एक तुम ही हो। मेरा ख्याल है... अब बच निकलने का तुम्हारे पास कोई बहाना नहीं है।'

- 'मैं तुम्हारी इज्जत करता हूँ राजेश बाबू ।'

- 'तुम बिल्कुल झूठ बोल रहे हो। जिसकी इज्जत की जाती है, उसे धोखा नहीं दिया जाता। याद है न आगरा की बात? मेरी पिस्तौल की सिर्फ एक गोली तुम्हारा काम कर देती। फिर भी मैंने तुम्हें मौका दिया था, सिर्फ इसलिए कि तुम्हारा झूठ ही तुम्हारा मुँह काला कर दे !'

-'राजेश!' अबकी बार वह गरजा।

संयत भाव से मुस्कराते हुए वह बोले- 'चीखो मत।'

- 'मैं चीख नहीं रहा हूँ। मैं तुम्हें जता रहा हूँ कि इन्सान को जमीन पर रह कर बात करनी चाहिए, आसमान पर उड़ कर नहीं।'

- 'सीख के लिए शुक्रिया।'

- 'मेरी दो सीख हैं राजेश बाबू। एक तो यह कि जब तक तुम सही सलामत गाँव में पहुँच जाओगे और तुमसे पहले मैं यहाँ से कूच कर दूंगा। यह सीख तुम्हारे लिए भी फायदेमन्द है और मेरे लिए भी। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि फिर तुम न कभी शेरसिंह का नाम सुनोगे न कभी काम सुनोगे। अगर स्वीकार करो, तो भेंट पूजा देने के लिए भी तैयार हूँ। दूसरी सीख है, न न उसकी जरूरत नहीं है।'

- 'मेरी भी एक सीख है... कहूँ?'

- 'कहो।'

-'अगर तुम भले आदमी हो तो तुम्हें खुशी-खुशी फांसी का फन्दा पहनने के लिए तैयार हो जाना चाहिए। और अगर तुम गैरतमन्द हो तो मैं तुम्हें

आत्म-हत्या करने का अवसर भी दे सकता हूँ।'

शेरसिंह ठहाका मार कर हँसा। भयंकर ठहाका... जिससे पूरा हॉल गूंज उठा।

- 'तो ऐसे बुलन्द इरादे हैं राजेश बाबू ? जिन्दगी एक कीमती चीज है। कुछ रुपयों की नौकरी के लिए उसे कुर्बान कर देने वाला बेवकूफ कहा जाएगा।'

- 'अच्छा !' शान्त स्वर में राजेश ने कहा। फिर उन्होंने सिगरेट निकाली, शेरसिंह की ओर बढ़ाते हुए कहा- 'जान कुर्बान करने का जब मौका आयेगा... तब यह भी सोच लूंगा कि नौकरी के लिए जान कुर्बान करनी चाहिए अथवा नहीं ?'

-'मौका आ गया है... तुम शेर की माँद में हो।'

राजेश हँसे- 'शेरसिंह नाम रख लेने से कोई शेर नहीं हो जाता। हालांकि शेर बेवकूफ जानवर होता है... फिर भी तुम्हारे मुकाबले उसमें ज्यादा अक्ल होती है। वह जंगल की गुफा में छुप कर रहता है, तुम्हारी तरह बस्ती में उत्पात नहीं मचाता। मरने के लिए गाँव की तरफ आना शेर का नहीं... सियार का काम है।'

- 'तो फिर हो जाये फैसला ?'

- 'फैसला तो हो चुका है... गैरत और बेगैरती का फैसला होना बाकी है।'

- 'तो फिर बेगैरती का तमाशा देखो। यों जब तक जिन्दा रहूँगा तब तक मुझे अफसोस रहेगा कि तुम्हारे जैसे होनहार को मैंने गोली मारी थी।'

- 'तुममें इतनी हिम्मत है?'

- 'आज तुम मेरी हिम्मत का ही कमाल देखोगे। तुमने समझा होगा कि मैं यहाँ चार पाँच आदमियों के साथ पड़ा हूँ। लेकिन आज न सिर्फ तुम्हें ठिकाने लगाऊंगा... बल्कि कोट मुराद गाँव को भी जला कर खाक करूंगा। इस गाँव को तबाह करने की जिम्मेदारी तुम्हारी होगी। शेरू...!'

- 'हाँ सरदार।'

- 'रख दे मशाल और उठा बन्दूक ।'

शेरू ने आज्ञा का पालन किया। मशाल एक ओर टांग कर वह दुनाली बन्दूक उठा कर खड़ा हो गया।

-'लगा निशाना।' शेरसिंह उठ कर एक तरफ खड़ा होते हुए बोला।

मसनद पर शेष रह गये मैं और राजेश।

मजाक नहीं था। गम्भीर मुख-मुद्रा में शेरू निशाना बांध रहा था।

- 'ठहर शेरू।' बिना हिले डुले राजेश बोले- 'तू अभी नया है, मेरा मतलब है

कि शेरसिंह के डाकू दल में तुझे सिर्फ चार साल हुए हैं। मानता हूँ कि तू अच्छा निशानेबाज है, लेकिन डाकू बनने पर भी अभी तक तूने कोई खून नहीं किया है। फौज का भगोड़ा जमादार है, अदालत में जुर्म का इकबाली होने पर भी तुझे पाँच साल से ज्यादा की सजा नहीं होगी। मेरी राय है कि फांसी पाने का सा जुर्म मत कर। बन्दूक शेरसिंह के हाथ में दे दे।'

शेरू तनिक झिझका।

शेरसिंह चीखा- 'शेरू... चला गोली।'

-'जो गोली चलायेगा उसे अपनी जान से हाथ धोना पड़ेगा शेरू ! मैं यहाँ अकेला नहीं हूँ। एक नहीं... दसियों आँखों ने तुम पर निशाना जमा रक्खा है।'

राजेश की इस बात से शेरसिंह चौंका और लपक कर तहखाने के उस दरवाजे की तरफ गया जहाँ से मैं और राजेश यहाँ प्रविष्ट हुए थे।

कुछ देर बाद ही वह मुस्कराता हुआ लौट आया।

-'बातों का अच्छा-खासा रौब डाल लेते हो ! मेरे सौ आदमी महल तो क्या, कोट मुराद को आकर घेर चुके होंगे।' शेरसिंह ने मेरी ओर संकेत करके कहा-'जब यह आया था तभी मैंने बन्दोबस्त करने के लिये आदमी भेज दिया था। पुलिस का कोई आदमी महल की बात तो दूर, कोट मुराद तक में नहीं घुस सकता। लेकिन घबराने की जरूरत नहीं है। मैं अब भी तुम्हारी जान बख्श सकता हूँ। बोलो... है शर्त मन्जूर ?'

- 'बन्दूक अपने हाथ में लो और कोशिश करो अगर गोली चला सको तो ?'

- 'शेरू... चला गोली।' राजेश की बात अनसुनी करके शेरसिंह बोला।

- 'शेरू... जान प्यारी है तो फेंक दे बन्दूक ।'

परन्तु शेरू ने बन्दूक तान ही दी।

बस क्षण मात्र की ही तो देर थी कि बन्दूक का घोड़ा दबे और राजेश के प्राण पखेरू उड़ जायें ! जरा सी निशाने में चूक होने पर भी शिकार हो सकता था।

एक चमत्कार हुआ तभी।

इधर शेरू की उंगलियां बन्दूक के घोड़े पर पहुँची और उधर...!

एक फायर हुआ... और एक चीख गूंजी।

मैंने समझा राजेश...!

उस क्षण आँखें बन्द कर ली थीं। परन्तु विपरीत हुआ। राजेश के दोनों हाथ खाली थे।

कहीं से गोली चली और शेरू की सीधी कलाई छेदती हुई निकल गई।

मैंने शेरू की चीत्कार सुन कर आँखें खोली। उसके हाथ से बन्दूक छूट कर गिर पड़ी थी और कलाई को पकड़ कर वह बैठता ही चला गया था।

सभी चकित थे। शेरसिंह भी... और उसके साथी भी। बिन्दी भी आह कराह भूल कर हॉल में चकित हिरनी की भांति चारों ओर निहार रही थी।

गोली किसने चलाई... गोली कहाँ से चली ?

केवल राजेश ही ऐसे थे जो शांत बैठे सिगरेट पी रहे थे... मानो कुछ हुआ ही न हो !

सब से अधिक परेशान था शेरसिंह।

- 'शेरसिंह !' धुआं उड़ाते हुए राजेश बोले- 'दूसरों के खून के प्यासे मत बनो। अगर हिम्मत है तो खुद बन्दूक उठाओ। बेगैरत होकर अदालत के कठघरे में जाने से बच जाओगे।'

शेरसिंह की आँखें बड़ी तेजी से इधर-उधर घूम रही थीं। यकायक वह बिजली की तेजी से सीढ़ियों की ओर दौड़ा।

उधर जैसे ही गोली चलने की आवाज उमा ने सुनी, वह अनिष्ट की आशंका से संतप्त होकर कूद पड़ी और नीचे की ओर दौड़ी।

उमा के दुर्भाग्य ने जैसे उसे धकेला हो ! राह में ही शेरसिंह ने उसे बांहों में उठा लिया।

राजेश दौड़े... मैं भी उनके पीछे दौड़ा... परन्तु...?

न हों। परन्तु उमा और शेरसिंह ऐसे अलोप हो गए थे... जैसे वहाँ कभी रहे ही

मुराद महल 87

ऊपर वाले तहखाने से नीचे तक, अफीम पिला कर भेड़ियों को सुस्त बनाने वाले कमरे से लेकर नीचे खजाने तक... सभी जगह देख मारा। परन्तु न उमा मिली न शेरसिंह।

मेरे पाँवों का जैसे दम हो निकल गया। चला नहीं जा रहा था... बस घिसट रहा था।

जब हम दोनों लौट कर फिर उसी हॉल में आये तो वहाँ सभी को उसी अवस्था में पाया जिस अवस्था में छोड़ा था।

बिन्दी को बहुत चोट लगी थी। अब वह मसनद के सहारे पड़ी कराह रही थी।

राजेश उसके निकट पहुँचे।

- 'बिन्दी !'

कराहते हुए बिन्दी ने आँखें खोली।

- 'बिन्दी, मैं तुम्हें भी अच्छी तरह जानता हूँ। तुम जगत कोट गाँव के मौजसिंह की पत्नी थी। शेरसिंह से तुमने आशनाई की और मौजसिंह को

कत्ल कर दिया। ठीक है न?'

बिन्दी ने कराहते हुए करवट बदल ली।

- 'एक खास अच्छाई हमारे देश में है। यूरोप की भांति हमारे देश की स्त्रियां अपराधिनी अधिक नहीं होतीं। जो हुआ, सचमुच बहुत बुरा ही हुआ। अब कुछ अच्छाई भी कर डालो। यह एक कुंवारी लड़की की इज्जत का सवाल है। तुम चाहो तो उसे बचा सकती हो।'

- 'मुझे किसी ने बचाया था?' तड़प कर बिन्दी ने कहा-'मैं भी आपको अच्छी तरह जानती हूँ राजेश बाबू। उसी लड़की के लिए तुम्हारे मन में इतनी दया ममता क्यों है? सुना था... उपदेश देना खूब जानते हो, आज यह जाना कि तुम्हारे उपदेश एकतरफा होते हैं।'

- 'तो तुम नहीं बताओगी कि शेरसिंह कहाँ गया है?'

- 'मुझे नहीं मालूम। भाड़ में जाओ तुम... और ऊपर से जाए शेरसिंह।'

इतना कह कर बिन्दी ने राजेश की ओर से मुँह फेर लिया।

उमा के इस प्रकार गुम हो जाने से सचमुच राजेश भी बहुत परेशान थे, फलस्वरूप उन्होंने बिन्दी से तर्क वितर्क नहीं किये। वह शीघ्रतापूर्वक सुरंग के

अन्दर गए और यह देख कर मुझे विस्मय हुआ कि वहाँ उनका थैला,

पिस्तौल और टार्च आदि सभी वस्तुयें एक मोड़ के कोने पर इस तरह रक्खी थीं कि आने जाने वाले की दृष्टि उन पर पड़ना कठिन था।

झोले में से ही उन्होंने एक छोटा सा बिना तार का संदेश प्रेषक यन्त्र निकाला। देखने में वह बिल्कुल जेबी रेडियो जैसा था।

स्विच दबाते ही यन्त्र चालू हो गया।

यन्त्र की ओर मुँह करके राजेश ने कहा- 'हैलो जयन्त... क्या स्थिति है?'

यन्त्र में से स्पष्ट आवाज सुनाई पड़ी- 'सब ठीक है, हमारी गिनती छः सौ है। कोई नई घटना नहीं है।'

- 'सुरंग के दरवाजे पर कौन है?'

- 'दस व्यक्तियों के साथ अल्ताफ है।'

-'उसे अन्दर आने का आदेश दो। ऊपर महल में कौन है?'

- 'नटराजन के साथ सौ आदमी !'

-'नटराज को बधाई दो, उसके ग्रुप का निशाना बहुत ही शानदार रहा।'

- 'मेरे पास सूचना है। निशाना तुम्हारे शिष्य श्रीकांत का था। यह भी सूचना है कि वह अन्दर हॉल में तुम्हें भली प्रकार देख रहा है।'

- 'ठीक है, अब मैं यन्त्र साथ रखूंगा। कोई नई सूचना हो तो मुझे तुरन्त

देना। शेरसिंह उमा को लेकर हॉल के पास ही कहीं गुम हो गया है। लगता है कोई दरवाजा है... ऐसा गुप्त दरवाजा जिसकी जानकारी अभी नहीं हो पाई है।'

संदेशों के आदान-प्रदान के कुछ ही देर बाद राजेश के विभाग के दस जासूस हॉल में आ गये। उनका नेता था... अल्ताफ हुसैन।

इसके बाद बिन्दी के अतिरिक्त अन्य व्यक्तियों को राजेश ने बाहर भिजवा दिया। सम्भवतः बिन्दी को उन्होंने जान-बूझ कर वहीं पड़ी रहने दिया था। ऊपर के कक्ष में अचेत पड़ी उस अभागी को भी मुक्ति मिल गई, जिसका अब तक संसार में कोई नहीं था। जब उसे ऊपर लेने पहुँचे तो उसके प्राण पखेरू सम्भवतः शेरसिंह के किसी आघात से उड़ चुके थे।

अब बड़े गौर से एक-एक सीढ़ी और उसके आस पास की दीवार आदि की जांच हो रही थी और मैं मिट्टी के माधो की भांति खड़ा सोच रहा था कि अब क्या होगा?

बेचारी उमा पर न जाने क्या बीत रही होगी?

- 'मिस्टर राजेश...!'

हॉल से लगभग दसवीं सीढ़ी पर खड़ा व्यक्ति आशा से भरे स्वर में बोला।

- 'क्या है खाडिलकर ?'

- 'इधर आकर देखिए तो...?'

राजेश के साथ-साथ उत्सुकतावश मैं भी उधर गया। सीढ़ियों की दीवार के पत्थरों के मोड़ पर एक पत्थर में कपड़े का थोड़ा सा टुकड़ा फंसा हुआ था।

बहुत थोड़ा सा, लगभग आधा इंच चौड़ा और डेढ़ दो इंच लम्बा... बस।

राजेश ने उसे खींच लिया। आशा की एक झलक सी उनके चेहरे पर दिखाई पड़ी।

- 'पहचानते हो?' कपड़े का टुकड़ा मेरी ओर बढ़ाते हुए राजेश ने पूछा।

- 'नहीं।' मैंने संक्षिप्त उत्तर दिया।

-'तब मुझे कहना पड़ेगा प्रमेन्द्र कि तुम एकदम बुद्धू हो ! भाई मेरे, प्रेमी तो मीलों दूर अपनी प्रेमिका की गन्ध सूंघ लेते हैं, और तुम अपनी प्रेमिका की साड़ी के टुकड़े तक को नहीं पहचान सके। सूंघ कर देखो... इसमें तुम्हें वह सुवास मिलेगी जो तुम्हारे मन में बसी है।'

कपड़े का टुकड़ा उन्होंने मेरे हाथ में थमा दिया और फिर एक नहीं, अनेकों टार्चों का प्रकाश उस दीवार पर पड़ा।

- 'बेशक... यह दरवाजा है और इसके खोलने और बन्द करने का यन्त्र भी कहीं आस पास ही होना चाहिए।' अल्ताफ उत्सुकता से दीवार का परीक्षण करते हुए बोला।

पत्थर की दीवार और खोलने तथा बन्द करने का यन्त्र।

अजीब सी बात थी। इंजीनियरिंग पढ़ते समय पुरानी इमारतों की बनावट आदि के विषय में बहुत कुछ पढ़ा था, परन्तु ऐसा विवरण कहीं नहीं आया था।

वह सब दीवार का चप्पा-चप्पा इस प्रकार देख रहे थे कि अगर चींटी भी कहीं रेंगती हो तो दिखाई पड़ जाए।

- 'इतनी देर होने से तो मामला बिगड़ सकता है।' परेशान से राजेश बोले।

- 'तरीका यह भी तो है कि हम दीवार ही तोड़ डालें। तहखाने में हैण्ड

ग्रेनेड का प्रयोग किया जा सकता है या नहीं?' अल्ताफ बोला।

- 'इन्जीनियर साहब यहाँ मौजूद हैं... यह बतायेंगे।' राजेश ने मेरी ओर संकेत किया।

- 'हर्गिज नहीं...।' मैंने दृढ़ता पूर्वक कहा।

- 'तब?' राजेश ने झल्ला कर दीवार में लात मारी-'बन गया काम अल्ताफ !' वह चीखे- 'दीवार हिलती है... जरा लगाओ तो जोर।'

परन्तु अधिक जोर लगाने की जरूरत नहीं पड़ी। जैसे ही अल्ताफ ने दीवार को धकेला, लगभग पाँच फीट लम्बी और दो फीट चौड़ी दीवार एक ओर

से पीछे हटती चली गई।

था न कमाल !

दरवाजा बाकायदा चूल, फ्रेम आदि, बढ़िया स्टील का बना हुआ था और बीच में पत्थर। साईज का ऐसा मिलान कि कोई सोच भी न सके कि दरवाजा है।

तड़ तड़ तड़ा तड़...।

जैसे ही दरवाजा दीवार का असार पार करके तनिक खुला, शायद इतना ही कि उसमें स्टेनगन की नली आ सके... अन्दर से गोलियों की बाढ़ छूटी।

गनीमत थी कि गोली किसी के सीने से पार नहीं हुई। अलबत्ता दो गोलियां अल्ताफ की हथेली में से पार निकल गईं। चौंक कर साथी पीछे हटे।

अल्ताफ भी था जीवट का आदमी, कराहा तक भी नहीं। फौरन ही स्वयं राजेश ने उसके हाथ में पट्टी बांध दी।

-'राजेश!' अन्दर से शेरसिंह का गरजता हुआ स्वर सुनाई पड़ा।

- 'राजेश ! तुम सुन रहे हो न मेरी आवाज? अगर तुमने फिर दरवाजा हटाने की चेष्टा की, तो कहे देता हूँ कि मैं इस लड़की को मार दूंगा। मैं अपने हथियारों के गोदाम में हूँ। एक महीने तक अकेला तुम्हारी पूरी फौज के साथ लड़ सकता हूँ... मैं कहता हूँ हट जाओ पीछे...।'

फिर गोलियों की बाढ़ छूटी।

और फिर शेरसिंह की आवाज गूंजी-'तुम्हारी जमानत के रूप में मेरे पास यह लड़की है। जरा भी शरारत करोगे तो इसे जिन्दा नहीं पाओगे।'

इस चेतावनी के बाद अन्दर से दरवाजा बन्द हो गया। पत्थर के बुत की भांति सभी खड़े रह गए।

मुराद महल 91

मन ही मन मैं सोच रहा था कि सचमुच ज्योतिषी की भविष्यवाणी सही है। उमा बच नहीं सकेगी।

तभी हाथ के एक स्पर्श से मैं चौंक पड़ा। दृष्टि फेर कर देखा... मेरे निकट ही बिन्दी खड़ी थी। सभी का ध्यान दूसरी ओर था... बिन्दी कब आई, किसी को मालूम नहीं था।

-'कौन है वह तुम्हारी ?' स्नेह-मिश्रित स्वर में बिन्दी ने मुझसे पूछा।

- 'वह मेरी पत्नी है।'

-'झूठ ! क्या मैं जानती नहीं हूँ... वह कैप्टेन की कुंवारी बेटी है।'

- 'तुम जान भी लो तो भी नहीं जान सकोगी बिन्दी !' राजेश उसके निकट आकर बोले-'इसलिए कि तुम्हारे मन में मोह ममता नाम की कोई भावना नहीं है। तुम क्या जानो कि प्यार का व्यापार कैसा होता है...?'

-'मैं तुमसे बात नहीं कर रही हूँ राजेश बाबू। मोह ममता का ठेका तो तुमने ले रक्खा है... दूसरे के पास यह चीज आयेगी भी तो कहाँ से? खाक भी नहीं जानते तुम मुझे। सुनो... मैं बताती हूँ तुम्हें कि मैं क्या हूँ? जगत कोट के मौजसिंह ने मुझ से ब्याह नहीं किया था, मेरी सौतेली माँ से मुझे तीन हजार रुपये में खरीदा था। सुन रहे हो न? पचास साल के मौजसिंह ने मुझ पन्द्रह साल की लड़की को तीन हजार में खरीदा था। इसलिए नहीं कि वह मुझसे अपना घर चलवाना चाहता था... खरीदा था इसलिए कि रात को शराब पीकर नशा मुझ पर उतार सके। अन्धे नहीं हो... कपाल में आँखें हैं, देखो यह है मौजसिंह की निशानी।'

इतना कह कर बिन्दी राजेश की ओर पीठ फेर कर खड़ी हो गई।

मैंने भी देखा कि उसकी कमर पर दसियों सीधे निशान थे। शायद पति हन्टर से मारता होगा... जो पक कर जख्म बने, वह सूख कर भी निशान छोड़ गए।

- 'अब जरा अपने दिल पर हाथ रख कर कहो कि अगर तुम अपनी रानी जी की पीठ पर निशान बनाते तो क्या वह तुम्हारी चूड़ियां पहने बैठी रहती ? ले चलो मुझे जहाँ ले चलना है, मैं कहूँगी कि हाँ मौजसिंह को मैंने कत्ल कराया था। कहे कोई अपनी छाती पर हाथ रख कर कि मैंने गलत किया है? बड़े आए हैं मोह ममता के ठेकेदार बन कर !

- 'खामोश रहो।' डांटते हुए अल्ताफ ने कहा।

-'न न... तुम चुप रहो अल्ताफ ! यह जो कहना चाहे इसे कह लेने दो।'

- 'कुछ नहीं कहना है मुझे।' बिन्दी फिर मेरी ओर देख कर बोली-'तो वह तुम्हारी मंगेतर है?'

मैंने उत्तर दिया- 'शेरसिंह उसे उठा न लाता तो अब तक हमारा विवाह भी हो गया होता !'

-'अच्छा... अगर उसे बचा दूं तो एहसान मानोगे न ?'

-'जी हाँ, जीवन भर एहसान न भूलूंगा।'

- 'बहुत प्यार करते हो उसे ?'

मुझसे कुछ कहते न बना।

बिन्दी के लहूलुहान चेहरे पर स्मित मुस्कान छा गई 'उसके लिए छोटा सा काम कर सकोगे ?'

- 'क्यों नहीं कर सकूंगा?'

- 'मैं देखने में कैसी लगती हूँ?' उसने पूछा।

मुझे लगा जैसे निर्लज्जता की सीमा चुक गई हो।

उसने फिर कहा-'मैं देखने में बहुत बुरी लगती हूँ न ? अच्छा अगर ऐसी बुरी तुम्हारी कोई बड़ी बहन होती तो तुम क्या करते... शायद जान से मार

देते ?'

प्रश्न विचित्र था, परन्तु मैंने सहज उत्तर दिया- 'बड़ी बहन पूज्य संज्ञा होती है। कोई भाई ऐसा नहीं सोच सकता।'

- 'तो समझ लो कि मैं तुम्हारी बड़ी बहन हूँ। मेरा कोई भाई नहीं था। होता तो क्या मैं किसी के हाथों तीन हजार ठीकरों के मोल बिकती ! तो मानते हो न मुझे बड़ी बहन ?'

- 'हाँ... मैं तुम्हें बहन मानता हूँ।'

-'तो मैं बचाऊंगी तुम्हारी दुल्हन को। राजेश बाबू से कहो कि मुझे एक पिस्तौल दे दें। दूसरे रास्ते से चलूंगी, आगे मैं रहूँगी और पीछे और सब। वहाँ जाने का एक रास्ता और भी है।'

राजेश ने एक व्यक्ति को आदेश दिया- 'नागेश... इन्हें अपनी पिस्तौल दे दो।'

उस व्यक्ति ने पिस्तौल बिन्दी के हाथ में दे दी।
-'आओ मेरे साथ... सुनो भैया !' उसने मुझे सम्बोधित किया-'अगर मैं मर जाऊं तो लाश को इस तरह नंगी मत रखना। कफन ओढ़ा देना और चिता में असली घी डालना। कभी वनस्पती ही...?'

उसकी बातों ने वास्तव में मुझे मोह लिया था। अनजाने ही मेरे मुँह से निकला-'उमा चाहे मरे या जिये... मैं आपसे मरने के लिये नहीं कह रहा

हूँ।'

मुस्कराई वह-'तुम तो बावले ही रहे भैया ! भला किसी के कहने-सुनने से कोई मरता है? मौत जब आना चाहती है तो आ ही जाती है। मैं मर नहीं रही हूँ, तुम से ज्यादा मुझे अपनी जान प्यारी है। मैंने तो अपने मन की बात कही है। वैसे ही जैसे लोग जीते जी वसीयत कर देते हैं। आओ।'

बिन्दी फिर सब को लौटा कर हॉल में ले गई। पिस्तौलें ताने तीन व्यक्ति वहीं सीढ़ियों पर पहरा देते रहे।

हॉल में वापस आकर बिन्दी ने कहा- 'हटा कर फेंको इस मसनद को।'

गाव तकिए, चांदनी, गद्दा और दरी हटते ही तख्तों की पांत लगी मिली। जब उसे हटाया गया तो स्पष्ट राह दिखाई पड़ी। नीचे उतरने के लिये सीढ़ियां थीं।

बिन्दी आगे बढ़ी। सबसे आगे वह थी... उसके पीछे राजेश, और फिर मैं।

एक आदमी के चलने लायक ही स्थान था। लगभग बीस कदम चलने के बाद ऊपर आगे बढ़ने के लिये सीढियां थीं। बिन्दी ने रुक कर सभी को चुप रहने का संकेत दिया और फिर वह दबे पाँव आगे बढ़ी।

संगमरमर की एक जाली थी और उसके बाद लालटेन की रोशनी से टिमटिमाता छोटा कक्ष था, जिसमें उमा और शेरसिंह स्पष्ट दिखाई पड़े। यों शेरसिंह का दावा गलत नहीं था। उस कक्ष में ढेरों बन्दूकें थीं। संगमरमर की आधी जाली तक बन्दूक की नलियां अड़ी हुई थीं।

हम सभी उस कक्ष में फैल गए। जाली के निकट केवल बिन्दी और राजेश थे।

उधर उमा के दोनों हाथ शेरसिंह ने पीछे की ओर बांध रक्खे थे। बेचारी दीवार के सहारे खड़ी सुबक रही थी। शेरसिंह दीवार की ओर पीठ किये बैठा था।

कक्ष में एकदम निस्तब्धता थी।

राजेश ने अपनी पिस्तौल की नली जाली में लगाई तो बिन्दी ने हाथ से उनकी पिस्तौल हटा दी। स्वयं वह निशाना लगाना चाहती थी।

उधर शेरसिंह की आवाज गूंजी 'बहरी हो क्या? इधर तो आओ।'

परन्तु उमा ऐसे खड़ी रही जैसे पत्थर की बुत हो।

- 'सुना नहीं?' वह फिर गरजा।

उमा निश्चल रही।

- 'तुम समझती हो कि मेरे हाथ से बच जाओगी? नामुमकिन... आज तक मेरे हाथ से कोई चिड़िया बच नहीं सकी। जो एक बार जाल में फंसी, बस पिंजरे की होकर रह गई। इधर आओ।'

उमा अब भी निश्चल खड़ी रही।

- 'तो सीधी उंगली से घी नहीं निकलेगा? ठीक है... शुरू शुरू में सभी नखरा करती हैं। लेकिन मैं तुम्हें धोखा नहीं दूंगा, तुम्हारे साथ दगा नहीं करूंगा। औरत औरत में भी तो फर्क होता है। उस बिन्दी की ही बात लो... जाने अपने आपको क्या समझती है? दो कौड़ी की औरत है, लेकिन ऐसा ही होता है... जब मोरी की ईंट चौबारे चढ़ती है तो ऐसा ही होता है। तुम्हारी बात और है, तुम पढ़ी लिखी हो। इस बात को मैं अब समझा हूँ कि औरत का सिर्फ खूबसूरत होना ही जरूरी नहीं है। जाहिल औरत और गधी में कोई फर्क नहीं है। अब मैं डाके डालना भी छोड़ दूंगा। हाँ... अब वह पहले वाले जमाने नहीं रहे। बहुत रकम है मेरे पास। कहीं दूर निकल चलेंगे और फिर जिन्दगी भर ऐश करेंगे।'

जान कर खुशी हुई कि विपरीत परिस्थिति में भी उमा का मनोबल नहीं टूटा था।

गर्व से अलबत्ता रुआंसे स्वर में वह बोली-'तुम्हारी जिन्दगी अब ज्यादा देर की नहीं है शेरसिंह। तुम्हारे पापों का घड़ा अब भर गया है।'

ठहाका मार हँसा वह-'क्या समझा है तुमने शेरसिंह को ? पुलिस के कुत्तों और गीदड़ों ने जाने मुझे कितने बार इस तरह घेरा है। लेकिन हजारों गीदड़ों को पछाड़ने के लिए अकेला शेर काफी होता है। सुबह होने से पहले ही राजेश की

लाश को रौंदता हुआ मैं तुम्हें साथ लेकर यहाँ से निकल जाऊंगा, दूर... बहुत दूर...! आओ... इधर आओ...।'

उमा फिर जड़ हो गई।

अबकी बार शेरसिंह ही आगे बढ़ा।

उमा चीखी-'खबरदार... जो आगे बढ़े तो...!'

शेरसिंह ठहाका मार कर हँसा 'ओह ! आगे बढ़ा तो शायद मन्त्र-बल से मुझे भस्म कर दोगी ?'

- 'तुम जानते हो कि मैं कैप्टेन की बेटी हूँ।'

- 'तो क्या हुआ?'

- 'जिस तरह बोटी बोटी कट जाने पर भी मेरे बाप ने तुमसे हार नहीं मानी, उसी प्रकार प्राण दे दूंगी... लेकिन तुम्हारे नाम पर थूकूंगी भी नहीं।'

- 'तो यह नक्शे हैं!' शेरसिंह आगे बढ़ा।

मेरी आँखों से लहू बरसा।

सोच रहा था कि बिन्दी के हाथ से पिस्तौल छीन कर गोली चला दूं।

धांय... धांय !!

उधर बिन्दी ने घोड़ा दबा ही दिया।

पहली गोली छाती में लगी। शेरसिंह तेजी से घूमा तो दूसरी गोली पीठ में

लगी।

शेरसिंह लड़खड़ाया और गिर पड़ा।

राजेश तेजी से वापस मुड़े।

फिर बिन्दी, मैं और... हॉल में होते हुये हम सब उस दीवारी दरवाजे में से होते हुए उस कक्ष में जा पहुँचे।

शेरसिंह अभी मरा नहीं था। राजेश को देखते ही उलाहने भरे स्वर में बोला-'तो तुम थे? मर्द होकर छुप कर पिस्तौल चलाई ! सामने आते तो बताता तुम्हें।'

पूरी शक्ति से शेरसिंह को लात मारते हुए बिन्दी बोली- 'मुझसे बात कर... मैंने चलाई है पिस्तौल।'

-'बिन्दी !' आर्त स्वर में शेरसिंह बोला-'तो तू मेरे खून की प्यासी हुई !

जिन्दगी भर जेल के सीखचों में सड़ेगी।

राजेश के रोकते रोकते एक लात बिन्दी ने शेरसिंह के और जमा दी-'भाग्य में सड़ना लिखा होगा तो सड़ लूंगी। लेकिन तुझ जैसे नर पिशाच को धरती से उठाने का पुण्य क्या मुझे नहीं मिलेगा? लो राजेश बाबू... अपनी पिस्तौल।'

-'बिन्दी... मैं तुम्हारा एहसानमन्द हूँ।' पिस्तौल लेते हुए राजेश वोले-'उमा की इज्जत बचाने का गौरव तुम्हें ही है।'

मुस्कराई बिन्दी-'गौरव तो सारे तुम्हारे ही भाग्य में हैं राजेश बाबू ! हथकड़ी साथ नहीं लाये हो क्या?'

- 'हथकड़ी की अब क्या जरूरत है?'

बिन्दी की ओर से जैसे जहर का बुझा हुआ तीर चला-'फिर एहसान का बदला कैसे चुकाओगे?'

था न ऐसा वाक्य कि मर्म छेद दे !

राजेश ने कोई उत्तर नहीं दिया। बात को पी जाने का कूटनीतिज्ञ गुण उनमें है। उन्होंने झोले में से अपना सन्देश प्रेषक बिना तार का यन्त्र निकाला।

कई व्यक्ति मिल कर शेरसिंह के बहते खून को रोकने के लिए पट्टी बांध रहे थे।

- 'हैलो... जयन्त ... जयन्त... जयन्त... हैलो।'

कुछ क्षण बाद उत्तर सुनाई पड़ा-'हाँ... मैं जयन्त बोल रहा हूँ। महल के दक्षिण में शेरसिंह के चालीस हथियार बन्द साथी आगे बढ़ रहे हैं। मैंने आदेश दिया कि उन पर फायर करने से पहले उन्हें घेर लिया जाये, ताकि एक भी भाग न सके। कोट मुराद में भी लगभग चालीस व्यक्तियों ने घुसने की चेष्टा की। सब को घेर कर हथियार रखवा लिये गये हैं। गाँव के भी दो आदमी डाकुओं के साथी हैं। एक है भैरव नाई और दूसरे गाँव के

ज्योतिषी जी हैं। उन्हें भी गिरफ्तार कर लिया गया है। अपने स्टाफ के अतिरिक्त जिले की पुलिस के चार ट्रक भी आ पहुँचे हैं। उनके साथ एक मैजिस्ट्रेट भी हैं।'

- 'ठीक है... जयन्त, तुम्हें यह जान कर खुशी होगी कि शेरसिंह सख्त घायल हुआ है। दो गोलियां उसे लगी हैं। कहा नहीं जा सकता कि गोलियां निकल गई हैं अथवा नहीं। वैसे वह होश में है। उसकी पट्टी करा कर मैं उसे भिजवा रहा हूँ। उसके विषय में अधिक शोर मचाने की आवश्यकता नहीं है। मैं आकर मैजिस्ट्रेट से स्वयं बात कर लूंगा।

इसके बाद भी सन्देशों का आदान-प्रदान होता रहा। परन्तु मैं उन्हें ध्यानपूर्वक सुन नहीं सका। बिन्दी मेरे निकट चली आई थी।

उमा के हाथ मैंने खोल दिए गए थे और मैं थकी सी उमा के साथ एक ओर बैठ गया था।

- 'क्यों भैया... मिल गई न तुम्हारी दुलहिन ?' मेरे और उमा के निकट आकर बैठते हुए स्नेहसिक्त स्वर में बिन्दी बोली।

- 'तुम्हारा बहुत बहुत धन्यवाद ! उमा... जब तुम संकट में पड़ गई तो मेरा और इनका बहन भाई का रिश्ता स्थापित हुआ। और इन्हीं की कृपा से तुम इस नर पिशाच के हाथों बच सकी हो।'

उमा ने मौन बिन्दी की ओर हाथ जोड़ दिये।

हँसी बिन्दी- 'मैं ठहरी देहातिन... मुझे हाथ जोड़ने की जरूरत नहीं है। मैंने जो कुछ किया है, अपने मतलब से किया है। मेरा कोई था नहीं। ले देकर एक शेरसिंह था, उसने भी मार-मार कर ऐसा कचूमर आज किया कि मन टूट गया। सोचा कोई तो एक अपना ऐसा हो जो मरने पर दो आंसुओं के साथ कफन डाल दे और चिता में आग दे दे ! इसलिए यह नाता जोड़ा है। एहसान जैसी कोई बात नहीं है। सच जानो, मैंने तुम दोनों पर कोई एहसान नहीं किया है। शेरसिंह से तो मुझे अपना हिसाब चुकाना ही था। सो भाई हिसाब चुक गया। क्या नाम है तुम्हारा... उमा ?'

-'हाँ?' उमा ने उत्तर दिया।

-'कैप्टेन की बेटी हो ?'

- 'हाँ !'

-'मन में सोच रही होगी कि एक डाकू की रखेल हूँ मैं?'

लजाई सी उमा बोली- 'आप कोई भी हों... मैं तो आपके एहसान के बोझ से सदा दबी ही रहूँगी।'

हँसी वह-'सदा मुझे ननद ही मानोगी न ?' उमा ने बिन्दी के गले में अपनी बांहें डाल दीं।

-'तुम सोच रही होगी कि शायद मैं अदालत से बरी होकर तुम्हारी गृहस्थी में आ पहुँचूंगी ... न न, बहुत पाप किये हैं मैंने। और अब मुझे उन सबका दण्ड

भी भोगना है। सच जानो... आज के बाद जीते जी तुम मेरा मुँह नहीं देखोगी। बस मरूंगी तब मरी का मुँह देखना। मन से न सही... दिखावे के लिए ही सही, जब मैं मरूं तो रोना जरूर।'

- 'छी ! आप बार-बार मरने की रट क्यों लगाये हैं?' मैं बोला-'अब सारा खेल ही निपट गया है। चलिए... आप हमारे साथ चलिए। बाहर खुली हवा में चलते हैं।'

वह फिर हँसी-'राजेश बाबू से पूछा है? मैं उनकी कैदी हूँ।' उठते हुए उसने कहा।

मैं और उमा भी उठे। शेरसिंह के पट्टियां बांधी जा चुकी थीं। अब उसकी आँखें बन्द थीं और वह मन्द मन्द कराह रहा था।

राजेश ने आदेश दिया- 'इसे जल्दी यहाँ से बाहर पहुँचाओ। पुलिस के साथ डाक्टर भी आया होगा। बिन्दी जी!' वह बिन्दी की ओर मुड़ कर बोले।

- 'जी।'

- 'ऊपर वाले कमरे में... मेरा मतलब है यहीं कहीं कोई ऐसा भी दरवाजा है जो मुराद महल के बड़े दरवाजे में खुलता है... जहाँ से भेड़िये दिखा कर शेरसिंह गाँव वालों को प्रेत के नाम से डराता रहा है?'

- 'जी हाँ, ऊपर वाले तहखाने का सांतवा पत्थर उसका दरवाजा है...।'

- 'धन्यवाद। उठाओ भई इसे।'

शेरसिंह की दशा बिगड़ती जा रही थी। उसके हाथ पाँव ऐंठ रहे थे।

घायल अल्ताफ ने शेरसिंह की नाड़ी टटोलते हुए कहा-'मिस्टर राजेश, यह जिन्दा बाहर तक पहुँच नहीं सकेगा।'

- 'मुर्दे को भी तो बाहर ले जाना ही है। उठाओ... आओ सब।'

इस छोटे से दरवाजे में से शेरसिंह को निकालने का प्रयत्न हो ही रहा था कि उसने दम तोड़ दिया।

मुराद महल का प्रेत सदा-सर्वदा के लिए सो गया। परन्तु वह न सही... उसकी लाश ही सही, हम सभी टार्च की रोशनी के सहारे ऊपर वाले कक्ष में जा पहुँचे। बड़ी आसानी से स्टील के फ्रेम में जड़ा पत्थर का वह दरवाजा मिल गया जिसके बूते पर शेरसिंह बड़ी सफलता से मुराद कोट के निवासियों को भयभीत करता रहता था। दरवाजे को खींचने के लिए लोहे का हैण्डिल लगा था। उसे

खींचते ही मुराद महल के विशाल हॉल में हम सब जा पहुँचे।

- 'सब लोग आ गए न?' राजेश ने टार्च के प्रकाश में सभी व्यक्तियों को देखते हुए पूछा- 'बिन्दी... बिन्दी कहाँ है... प्रमेन्द्र, बिन्दी कहाँ है?'

मैंने भी चारों ओर दृष्टि घुमा कर देखा। फिर यह सोच कर कि शायद

तहखाने में ही रह गई हो... मैं नीचे उतरा। ऊपर वाले तहखाने में भी बिन्दी नहीं थी। उमा और राजेश भी तहखाने में आ गए थे। चारों ओर टार्च घुमाई, परन्तु कहीं भी तो मेरी बहन... बिन्दी नहीं थी।

राजेश तेजी से सीढ़ियों की ओर लपके। अभी तक अंधेरे में टटोलते हुए मैं और उमा भेड़िये वाली कोठरी तक ही पहुँचे थे कि राजेश खाली हाथ लौट आये। बिन्दी वहाँ भी नहीं थी।

उन्होंने पत्थर के दरवाजे को बन्द देख कर उसे धकेला। खुलने पर पहले वही अन्दर प्रविष्ट हुए। फिर उमा और मैं।

बिन्दी नहीं थी। नहीं... बिन्दी वहाँ नहीं थी।

बिन्दी की लाश थी वहाँ ।

हथियारों के गोदाम में थी ... कनपटी से लगा कर पिस्तौल का घोड़ा दबा दिया था।

शान्त फर्श पर पड़ी थी वह। पिस्तौल अब भी उसकी कनपटी से सटी हुई थी।

राजेश ने गहरी साँस ली।

उमा रो पड़ी... रोने के लिये कह गई थी न वह !

जीवन में कुछ क्षण के लिये बहन मिली। हँसी... मुस्कराई... और चली गई।

-'हटो उमा।' राजेश बोले-'मत रोओ। इस बेचारी की तो मृत्यु ही मुक्ति थी। कितनी बुरी बात है कि इसकी अच्छी आत्मा को जगाने के लिए मुझे कुछ कड़वे शब्द कहने पड़े। नया जीवन आरम्भ कर रही हो न... बिन्दी तुम्हारे लिए सबक है। हमारे समाज में स्त्री की जरा सी गलती ही उसके लिए अभिशाप बन जाती है... परन्तु सोना तप कर ही निखरता है। आत्म हत्या सुगम नहीं होती। जाने किस-किस गलती का बेचारी ने आत्म हत्या करके प्रायश्चित किया है।'

इतना कह कर राजेश बिन्दी की लाश उठाने के लिए झुके।

मेरे सम्मुख बिन्दी की मुख छवि नाच गई। मुस्कराती हुई मुख छवि और उसकी वसीयत !

- 'ठहरो मिस्टर राजेश।' मैंने उन्हें रोका।

- 'क्या बात है?' उन्होंने पूछा।

- 'सभी बातें आपके सामने ही तो हुई हैं! न न... बिन्दी को दिया गया वचन मैं नहीं तोड़ सकूंगा।'

- 'वचन ?'

-'जी हाँ। इससे बहन का रिश्ता जो बांधा था। आप रहने दीजिये... मैं उठाऊंगा अपनी बहन को। दरवाजे से निकलने में उमा मुझे सहायता

देगी।'

राजेश एक ओर हट गये।

- 'आपने सब कुछ सुना था न...?' मैंने बिन्दी को अपनी बांहों में उठाते हुए कहा।

- 'हाँ हाँ... मुझे कोई आपत्ति नहीं है।'

- 'बिन्दी की लाश मुझे दिलानी होगी। रिश्ते के अनुसार मैं इसकी दाह क्रिया करूंगा।'

राजेश ने मेरी बात का कोई उत्तर नहीं दिया। दरअसल हम सभी उदास थे। बिन्दी की आत्म हत्या ने सभी के अन्तर को कचोटा था।

बिन्दी की लाश को लेकर मैं ऊपर महल में पहुँचा।

राजेश ने ऐसा क्यों किया... यह जानने में मैंने दिलचस्पी नहीं ली।

जब दिन निकल आया तो मैंने उमा को अपना पर्स देकर कहा कि वह जाकर अपने भाई मेघराज के द्वारा बिन्दी के कफन आदि का प्रबन्ध करा दे।

मुराद महल इस समय अच्छी खासी छावनी बना हुआ था। पुलिस के कई दस्ते वहाँ पहुँच चुके थे। केन्द्रीय खुफिया विभाग के ढेरों कर्मचारी भी वहाँ उपस्थित थे। वह व्यक्ति भी वहाँ उपस्थित थे जो गिरफ्तार किए गए थे।

दरअसल हुआ यह कि जब उमा जाने लगी तो दरवाजे पर उपस्थित पहरे

वालों ने उसे जाने से रोक दिया। मैंने और उमा ने मिल कर उस भीड़ भाड़ में व्यस्त राजेश को खोजा और उनसे पहरे वालों की शिकायत की।

उन्होंने कहा- 'उमा, तुम जा सकती हो। तुम्हारे जाने पर पाबन्दी नहीं है। परन्तु निवेदन है कि रात की घटना के विषय में अभी किसी से कोई बात-चीत मत करना।'

लगभग एक घन्टे बाद ही उमा ने मुझे आकर सूचना दी कि शवयात्रा के लिए मेघराज तथा उसके कई मित्र तत्पर हैं।

कफन, टिकटिकी सभी अकेली उमा लेकर आई थी। उसी ने बताया कि मुराद महल की सीढ़ियों तक पुलिस का कड़ा पहरा है। उसके पास राजेश का लिखा हुआ आदेश पत्र था, अतएव केवल वही आ सकी। फिर न जाने राजेश कहाँ चले गए और मैजिस्ट्रेट ने मुझे बुला कर आदेश पत्र देते हुए कहा कि मैं बिन्दी के शव को दाह संस्कार के लिए ले जा सकता हूँ।

मैजिस्ट्रेट ने भी राजेश वाली बात दुहराई कि मैं किसी से भी रात में घटित घटनाओं का जिक्र न करूं। महल की सीढ़ियों के नीचे पूरा गाँव जमा था।

बिन्दी की शव यात्रा में बहुत आदमी साथ गए।

और तो और मेघराज ने मुझसे कई बार जानने की चेष्टा की कि मरने वाली यह औरत कौन है और रात ही रात में इतनी पुलिस कहाँ से आ

गई?

बात को टालना था... सो टाल दिया। स्वयं अपने हाथों से मैंने बिन्दी की दाह क्रिया की। जिस समय मैं चिता में आग दे रहा था, मैंने अपने निकट ही राजेश को भी मौन और उदास खड़ा पाया। जाने कब और कहाँ से वह आ पहुँचे थे।

फिर श्मशान का काम समाप्त हुआ। राजेश मेरे साथ ही वापस लौटे।

जब हम सब मुराद महल लौटे तो महल की सीढ़ियों पर बाकायदा मंच बन गया था। मैजिस्ट्रेट महोदय और सुपरिटेन्डेण्ट आफ पुलिस मंच पर विद्यमान थे। ध्वनि विस्तारक यन्त्र पर पब्लिक को आकर्षित करने के लिए संगीत के रिकार्ड बजाए जा रहे थे।

राजेश अपने साथ मुझे और उमा को भी मंच पर ले गए। काफी देर तक उनकी सुपरिटेन्डेण्ट साहब तथा मैजिस्ट्रेट महोदय से जाने क्या बातें होती रहीं।

फिर राजेश ने मुझे और उमा को एकान्त में ले जाकर कहा-'निश्चित

यह हुआ है कि शेरसिंह की मृत्यु की दोबारा घोषणा नहीं होगी। ऐसा करने के अनेकों कारणों में से एक कारण यह भी है कि लोगों को व्यर्थ के भूत-प्रेत के विवाद में हम स्वयं फंसा देंगे, जबकि वास्तविकता यह है कि शेरसिंह डाकू ने अपने ही एक साथी की लाश को चालबाजी से अपनी

लाश की अपने परिवार वालों से पहचान करवा कर पुलिस को चकमा देने में कामयाब हो गया था। आज यहाँ आप केवल शेरसिंह की बात को गुप्त रखें... बाकी बातें अभी प्रकट कर दी जायेंगी।'

इतना कह कर राजेश मंत्र पर माइक के निकट पहुँचे और ग्रामवासियों पर उन्होंने इस प्रकार रहस्य प्रकट किया- 'आदरणीय जिला मैजिस्ट्रेट महोदय, पुलिस सुपरिन्टेंडेंट साहब तथा मुराद कोट वासियो... कभी-कभी ऐसा भी होता है कि साधारण तिल जैसी बात विराट ताड़ जैसी बन जाती है। ऐसा ही मुराद महल के विषय में हुआ। पुरातत्व विभाग द्वारा इस उपेक्षित महल में दर्शक बहुत कम आते हैं... लगभग नहीं ही आते। इसका एक कारण इसका मुख्य रेलवे लाइन पर न होना भी है। परन्तु दूसरा और प्रमुख कारण है पुराने स्मारकों का महत्व कम करके आंकना... जैसा कि ब्रिटिश युग में होता रहा है। आपको यह सुन कर आश्चर्य होगा कि नई दिल्ली की राजधानी में जब अंग्रेजों का जमाना था, हिन्दी के प्रसिद्ध आदि कवि रहीम खानखाना का मकबरा चोरों और डकैतों का अड्डा बना रहा और दिनों दिन क्षीण होता गया, हालांकि वहाँ तब भी रक्षित इमारत का बोर्ड लगा था।

परन्तु प्रजातन्त्र युग आने के बाद भारतीय प्रशासन ने, भारतीय नागरिकों ने प्राचीन स्मारकों का महत्व समझा है। अब उपेक्षित स्मारकों पर बहुत कुछ खर्च किया जा रहा है। इसके विपरीत इस गाँव के श्री मेघराज वकील ने केन्द्रीय सरकार को अन्य कारण बताते हुए प्रार्थना पत्र दिया कि मुराद महल को नष्ट कर दिया जाए। श्री मेघराज वकील का सुझाव गलत था। परन्तु उन्हीं के प्रार्थना पत्र का प्रभाव है कि मुराद महल के प्रेत का रहस्य सदा सर्वदा के लिए खुल गया है। मैं श्री मेघराज वकील को सुपरिन्टेन्डेण्ट आफ पुलिस तथा जिला मैजिस्ट्रेट की ओर से धन्यवाद देता हूँ। वकील

साहब के पिता स्मरणीय साहसी व्यक्ति थे। दस्यु शेरसिंह को समाप्त कराने में उन्होंने वीरगति पाई। और श्री मेघराज जी के प्रयत्नों से शेरसिंह का समस्त दल पकड़ने में पुलिस समर्थ हो सकी है। देखिये...।'

बड़ा ही दिलचस्प प्रदर्शन आरम्भ हुआ। शेरसिंह के जितने साथी थे... वे सब हथकड़ी और बेड़ियों में मुराद महल की सीढ़ियों से उतारे गये। किसी फिर कठघरों में से बन्द भेड़िये उतारे गए। अब वे सब व्याकुल थे और गुर्रा रहे थे... उन्हें समय पर नशा जो नहीं मिला था ! फिर वह दौलत पुलिस की सुरक्षा में प्रदर्शित की गई जो शेरसिंह का खजाना थी।

वह हथियार... जो शेरसिंह के संग्रहालय में थे।

ककेर के साहू राधारमण की मृत पत्नी की लाश।

गाँव के निवासी विस्मय से एक दूसरे का मुँह ताकते रह गये।

राजेश ने घोषणा की-'यह हैं वे प्रेत जो मुराद महल को अपना अड्डा बनाये हुए थे। दरअसल पुलिस की गलती यह हुई कि उसने जब शेरसिंह से लोहा लिया था तो महल को अच्छी तरह नहीं देखा। और अब आप प्रथम बार यह जानेंगे कि मुराद महल के नीचे कई तहखाने हैं... जिनमें प्रवेश करने के एक नहीं, कई रास्ते हैं। हुआ यह कि शेरसिंह का डाकू दल तहखानों में अड्डा जमाये रहा और आपको ऐसे भेड़ियों से डराता रहा जिन्हें अफीम पिला कर हर समय मदहोश रखा जाता था। आप देखेंगे कि महल

के दरवाजे की दीवार में ही एक पत्थर का ऐसा दरवाजा है, जो सुरंग की ओर जाता है और उसे बन्द करने के बाद यह जानना बहुत ही कठिन है कि यहाँ दीवार है या दरवाजा ? उसी दरवाजे से शेरसिंह के साथी आपको डराते और भयभीत करते रहे। अब इससे पहले कि मैं आपको महल का तहखाना देखने का निमन्त्रण दूं, एक निवेदन और करना चाहूँगा। कोट मुराद के निवासियों के पास मुराद महल एक राष्ट्रीय धरोहर है। इसकी सुरक्षा आप सबका कर्तव्य है। जिला मैजिस्ट्रेट महोदय ने वायदा किया है कि वे स्टेशन से लेकर कोट मुराद तक बढ़िया पक्की सड़क बनाने की और उस पर आरामदेह बसें नियमित रूप से चलवाने की सिफारिश करेंगे। साथ ही आप सब पुरातत्व विभाग से लिखा पढ़ी करेंगे कि वे मुराद महल का आकर्षक प्रचार करे ताकि यहाँ अधिक से अधिक सैलानी आयें और फलस्वरूप कोट मुराद के निवासियों को एक अच्छा बाजार यहाँ बनाने का अवसर मिले। अन्त में पुराने जमाने की कारीगरी का अद्भुत नमूना देखने के लिए आप सब निमन्त्रित हैं। तहखाना खुला है और उसमें प्रकाश की समुचित व्यवस्था कर दी गई है। जाइये... और देखिये।'

कुछ क्षण सब स्तब्ध से खड़े रहे।

सीढ़ियों पर सबसे पहले अपनी पत्नी श्यामा का हाथ थामे मेघराज बढ़े। उसके बाद तो जैसे पूरा गाँव उमड़ पड़ा।

एक प्रश्न था... जो मुझे कुरेदे डाल रहा था। फलस्वरूप जैसे ही राजेश माईक से हटे, मैंने उनसे कहा-'मैं आपका सिर्फ एक मिनट का समय लेना चाहता हूँ।'

वे मुस्कराये। वह तो केवल मुस्कराये ही जयन्त चीख कर बोला-'देखा राजेश, जमाना कितनी तेज रफ्तार से दौड़ रहा है !'

-'यह उदाहरण क्या मुझ पर दिया गया है?' मैंने पूछा।

- 'बिल्कुल।'

- 'कृपया अब यह रहस्य खोल दीजिए।'

- 'कैसा रहस्य ?'

- 'मेरा मतलब है आपकी मुझसे क्या नाराजगी है?'

- 'नाराजगी बिल्कुल है।'

- 'कहें... कम से कम मैं जानूं तो...?'

- 'आप सिर्फ एक मिनट का समय चाहते हैं न...?'

- 'जी हाँ।'

- 'जब कि हमें आशा थी कि आप मुझसे और मिस्टर राजेश से कम से कम बारह घन्टे का समय चाहेंगे। खूब बढ़िया दावत होगी और विवाह प्रेजेन्ट देने से हम इस बहाने से बच जायेंगे कि गाँव के बाजार में प्रेजेन्ट लायक कुछ मिलता नहीं है। अपनी देवी जी को देखिए।' मंच पर एक ओर बैठी उमा की ओर संकेत करते हुए जयन्त ने कहा-'रात में तो ये विवाह के

लिए अधीर होकर गलियों में दौड़ी फिर रही थीं... और अब देखिए, ऐसे इत्मीनान से बैठी हैं जैसे सूदखोर महाजन। यह है जमाने की रफ्तार मिस्टर प्रमेन्द्र। इतने ढेर अतिथियों के सम्मुख कौन विवाह करे? समझदार आदमी समझते हैं कि दावत फिजूल खर्ची है।'

मैं हँसा- 'यह बात आप उमा से कहिए, उसके भाई को जमाने की रफ्तार से परिचित कराइये। परन्तु इसमें मेरा क्या दोष है? रात की बात और थी, अब तो जितनी आतुरता दावत की आपको है... उससे कहीं सैकड़ों गुना अधिक आतुरता मुझे दुल्हन पाने की है। मैं एक मिनट केवल एक जानकारी पाने के लिए आपसे चाहता था।'

जयन्त ने अपने पेट पर हाथ फेरते हुए कहा- 'नहीं भाई, अब दावत पाये बिना हम कोई जानकारी नहीं देंगे। आओ भाई राजेश... प्रमेन्द्र बाबू, आपसे कुट्टी हुई।'

पूर्ववत मुस्कान सहित राजेश ने पूछा- 'बताओ... क्या पूछ रहे थे तुम ?'

- 'अगर आपने मेरी शंका का समाधान किया तो मैं मिस्टर राजेश... आपको जादूगर समझेंगा।'

हँसे राजेश-'विश्वास करो, यह जादूगरी का काम हमारे खानदान में किसी ने नहीं किया।'

-'जब आपने शेरसिंह को चैलेंज किया और शेरू ने आपकी और बंदूक

तानी... तब शेरू पर गोली किसने चलाई ?'

यकायक राजेश गम्भीर हो गए- 'प्रमेन्द्र, अज्ञानता अन्ध-विश्वासों को जन्म देती है। गोली कहाँ से चली... यह जानकारी मुझसे अधिक तुम्हें होनी चाहिए।'

-'मुझे...?'

-'बेशक। तुम सिविल इंजीनियर हो... तुम्हें यह जानकारी होनी चाहिए कि आज भी और पहले भी तहखाने देखने के लिए नहीं, उपयोग के लिए बनाए जाते थे।'

- 'यह जानकारी तो मुझे है।'

- 'तब प्रश्न का उत्तर तुम स्वयं दे सकते हो।' मेरे कन्धे पर हाथ रख कर उन्होंने कहा-'हर तहखाने में ऐसा प्रबन्ध किया जाता है कि उसमें सांस लेने लायक हवा आती रहे। इस तहखाने के सबसे बड़े हॉल में जहाँ घटना घटी... उस स्थान के ठीक ऊपर तुमने शायद देखा हो, मस्जिद के सामने वाला वह सहन है जहाँ लगभग पचास फीट के क्षेत्रफल में बढ़िया नक्काशी-दार फर्श बना हुआ है। तब हम सभी ने उस फर्श को गौर से नहीं देखा था। उस सहन के फर्श में सीधे और आड़े छिद्र हैं जो तहखाने में हवा देते हैं। आवेशवश जब तुम समय से पहले ही शेरसिंह से जा भिड़े थे, तब मैंने वायरलेस द्वारा जयन्त को सूचना दे दी थी कि वह तुरन्त आदमियों को महल के ऊपर उन समस्त वायु-छिद्रों पर नियुक्त कर दे, ताकि संकट के समय वहाँ से हमले किए जा सकें। तुमने नोट किया होगा कि शेरसिंह तेजी से भाग कर ऊपर नहीं, हथियारों वाले गोदाम में पहुँचा।

वह तहखाने का पुराना निवासी था और जानता था

कि उस स्थान के वायु-छिद्र छत के ऊपर नहीं... लगभग साठ फीट ऊंची महल की दीवार में हैं, जहाँ तुरन्त नहीं पहुँचा जा सकता था। तुम भी उमा सहित जाओ और मस्जिद के सामने वाले सहन के फर्श के वह छिद्र देखो जहाँ से न केवल केन्द्रीय खुफिया विभाग के व्यक्ति अन्दर का दृश्य देखते रहे, बल्कि किसी भी क्षण निशाना लगाने के लिए तत्पर रहे और... निशाना लगाया भी।'

- 'समझा। तो हवा के छिद्र केवल तहखाने के हॉल में ही हैं?'

- 'फिर वही बात ! भाई, तहखाना उपयोग के लिए होता है... अतएव सांस लेने का प्रबन्ध हर स्थान पर है। मेरा काम समाप्त हो चुका है, अब यह तुम्हारा काम है... तुम पता लगाओ शेष वायु-छिद्र कहाँ कहाँ हैं?'

उमा ने आकर बात-चीत में बाधा डाली। शायद अकेले बैठे-बैठे ऊब गई थी। निकट आकर वह बोली- 'जरूरी बातें तो नहीं हो रही हैं?'

जयन्त ने उसे भी बनाया-'बहुत जरूरी बातें हो रही हैं उमा जी। परन्तु इस वाद विवाद का अन्त तभी होगा जब आपके भाई-भावज यहाँ भरी सभा में निर्णय देंगे।'

- 'कैसा निर्णय ?'

- 'यह कि दावत कैसी और किस समय हो रही है?'

- 'दावत...?' चौंक कर उमा बोली- 'माफ कीजिएगा, मेरे भाई साहब को इस बात का बहुत खेद है कि वह कल परेशानी में आपका आतिथ्य नहीं कर सके। आप अभी इसी क्षण दावत के लिए आमंत्रित हैं। आइए... चलिए।'

- 'सब तैयारियां हो चुकी हैं?'

- 'मेरी भाभी कुशल गृहणी हैं। दावत आपको तैयार मिलेगी, कतई विलम्ब न होगा।'

- 'पंडित बुला लिया है?'

- 'पंडित...?' उमा चौंकी।

- 'बिना उपलक्ष के दावत कैसे हो सकेगी ?'

- 'आप अतिथि हैं।'

-'अपने बिल्कुल गलत समझा है उमा जी। हम अतिथि नहीं हैं... हम बराती हैं। जाइए और अपने भैया से कहिए कि बारात भूखी है और बाराती

निठल्ले नहीं हैं। दावत का इन्तजाम करें... विवाह की रस्म पूरी करें और विदा की जल्दी करें।'

शर्म से उमा का चेहरा लाल हो गया। वह न केवल वहाँ, बल्कि मंच पर भी न ठहर सकी। तीर की तरह सीधे घर गई। एक बार मुड़ कर भी न देखा।

इसके बाद शाम को मेरा और उमा का विवाह हो गया।

मेरे विवाह में जिला मैजिस्ट्रेट तथा पुलिस सुपरिंटेंडेंट भी सम्मिलित हुए। राजेश और जयन्त ने हमें विवाह पर उपहार स्वरूप एक कालीन भेंट किया जो कोट मुराद की घरेलू दस्तकारी का एक अच्छा नमूना है।

टन टन... आफिस की घंटी ने आठ बजाए।

शंकर माथुर चौंके-'अरे... आठ बज गए ! भई खूब दिलचस्प किस्सा रहा। परन्तु मंगल ने यह किस्सा बिल्कुल दूसरे ढंग से सुनाया था। उनका कहना है कि पुलिस नौबतपुर और टीकम गढ़ी में पड़ाव डाले पड़ी रही और तभी कोट मुराद पहुँची, जब सरकार के भेजे हुए जादूगर ने प्रेत को वश मे कर लिया। ठाकुर साहब मिस्टर राजेश को जादूगर समझते हैं।'

प्रमेन्द्र मुस्कराया-'फिर भी वह यह बात ठीक कहते हैं कि पुलिम टीकमगढ़ी और नौबतपुर में पड़ाव डाले पड़ी रही। दरअसल राजेश यह नहीं चाहते थे कि किसी किस्म का हंगामा हो। अगर मैं आवेश में आकर शेरसिंह से जाकर न उलझ जाता और वह अपने साथियों को प्रेमपुर गाँव से न बुलवाता तो राजेश हर्गिज पुलिस अथवा केन्द्रीय खुफिया विभाग के अपने साथियों को न बुलवाते।'

-'तुम ठीक कहते हो। मिस्टर राजेश ने वैसे भी बहुत चेष्टा की कि प्रेत का

भ्रम लोगों में न फैले। परन्तु भारत में ही नहीं संसार भर में प्रेतों की कहानियां कहने सुनने में लोग बड़ी दिलचस्पी लेते हैं। दिलचस्पी अन्ध विश्वासों को अंकुरित करती है और व्यर्थ भ्रम मन में पनपते रहते हैं।

-'जैसे कि ठाकुर मंगलसिंह की बैठक में मैंने भी सिहरन महसूस की थी। लो... सिगरेट पियो।'

-'धन्यवाद ।' प्रमेन्द्र ने सिगरेट लेकर जलाते हुए कहा-'अब उठिये... आठ बज चुके हैं।'

- 'हाँ-हाँ... बस उठते हैं। लगता है श्रीमती जी का डर लग रहा है?'

प्रमेन्द्र हंसा, 'हां।

- 'वैसे कैसी गुजर रही है उमा के साथ ?'

- 'आपकी कृपा है... अच्छी ही गुजर रही है। अलबत्ता कैप्टेन की बेटी और वकील की बहन होने के नाते वह मेरा रौब बिल्कुल नहीं मानती और तर्क में तो पराजित होना उन्होंने सीखा ही नहीं है। उदाहरण के लिए मेरी इच्छा है कि वह एल. एल. बी. कर लें। दाखिले आदि का प्रबन्ध भी कर लिया था, परन्तु उनकी दलील से पराजित होना पड़ा और फलस्वरूप सारे दिन तो खाना पकाती है और कसीदा काढ़ती हैं।'

- 'अरे! यह तो सचमुच उन्होंने गोल्डन चांस खो दिया। आखिर क्यों उन्होंने एल. एल. बी. ज्वाइन नहीं किया?'

- 'उनकी एक शर्त थी जिसे मैं तुरन्त नहीं निभा सका।'

-- 'क्या शर्त थी ?'

- 'उनकी शर्त थी कि मेरा वजन एक सौ चालीस पाउण्ड होना चाहिए। दुर्भाग्य से मेरा वजन इतना जल्दी नहीं बढ़ पाया। हालांकि बादाम का निशास्ता वह निरन्तर पिलाती रही। परन्तु दाखिले की अन्तिम तारीख के दिन एक पौण्ड वजन कम रह गया।'

बेचारे शंकर माथुर हँसते हँसते दोहरे हो गए। इसी हँसी के वातावरण में दोनों उठे।

सड़क पर आकर यकायक माथुर साहब रुक गए- 'भई प्रमेन्द्र बाबू, एक शंका का समाधान रह गया।'

- 'यह कहना।'

- 'आरम्भ में तुमने बताया था कि जयन्त बाबू बहुत भयभीत से थे, परन्तु बाद में तो उन्होंने भयभीत होने जैसा कोई काम नहीं किया ?'

- 'माथुर साहब, मिस्टर जयन्त के विषय में मैं कुछ भी कहने में असमर्थ हूँ। वह एक विचित्र व्यक्तित्व हैं, और किस समय वह क्या करेंगे... इसका उत्तर केवल राजेश ही दे सकते हैं। बकौल राजेश के वह अपने स्वभाव से लाचार

हैं और किसी भी काम को वह झींके बिना नहीं करते। परन्तु फिर भी उनमें अनेकों क्वालिटी हैं और तभी वह राजेश जैसे जीनियस जासूस के गहरे दोस्त और साथी हैं।'

***** समाप्त *****

sjeet

धारावाहिक

1

जैसा कि आमतौर पर उपन्यासों में होता है... इस उपन्यास के नाम, पात्र और स्थानादि कल्पित हैं। किसी भी वास्तविक स्थान अथवा जीवित एवं मृत व्यक्ति से उपन्यास का सम्बन्ध नहीं है।

- लेखक ।
ओम प्रकाश शर्मा

***** समाप्त *****

जगत सीरीज़ के कुछ खास उपन्यास

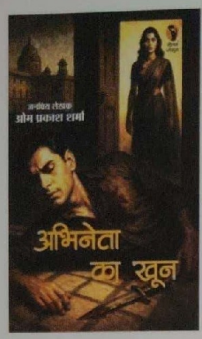

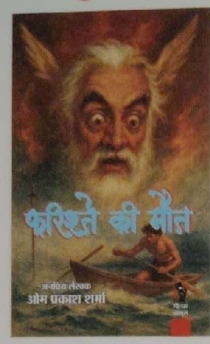

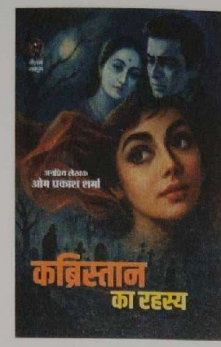

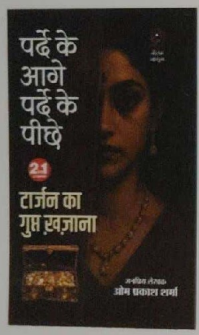

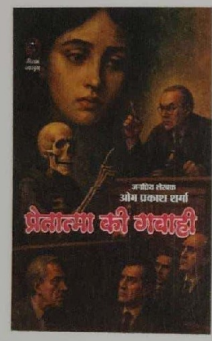

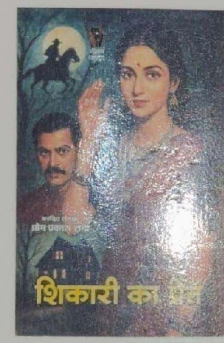

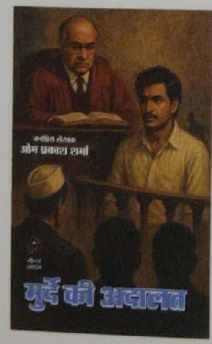

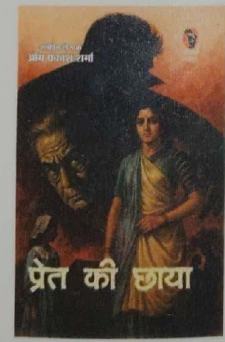

नीलम जासूस

उपन्यास

www.neelamjasoos.com

9 788199 273986

MRP ₹ 175

Avaliable at:
amazon
neelamjasoos.com

Printed by-Subodh Bhartiya Grafix -9310032466